CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

38

9.3

वेद में प्रेम, अहिंसा, मैत्री

२५१ ऋचाओं की परिक्रमा, छन्दमय नवनीत और भावार्थ

श्रीकृष्णदत्त भट्ट

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

आदरणीया श्री [illegible]जी को सादर

[illegible] का [illegible]

प्र. मंत्री

अ.भा. कृषि गोसेवासंघ

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

वेदमें प्रेम, अहिंसा, मैत्री

चारों वेदोंसे चुनी हुई २५१ ऋचाएँ

छन्दमय नवनीत

मंत्रोंकी परिक्रमा तथा भावार्थ—वेदामृत

•

भूमिका

डा० आचार्य मुंशीराम शर्मा 'सोम'

•

लेखक

श्रीकृष्णदत्त भट्ट

•

विश्वधर्म-शांति-सम्मेलन

सत्संग सदन

हनुमानपुरा, वाराणसी—२२१०१०

प्रथम संस्करण] जून १९८४ [मूल्य आठ रुपया

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

WCRP
Varanasi (U.P.)-10

लेखक
श्रीकृष्ण दत्त भट्ट

लव एण्ड नान-वायलेन्स इन दि वेद
[वेदमें प्रेम, अहिंसा, मैत्री]

प्रथम संस्करण
निर्जला एकादशी
९ जून, १९८४

First Edition,
Nirjala Ekadashi
June 9, 1984 A. D.

मूल्य (अंग्रेजी अथवा हिन्दी)
आठ रुपये मात्र
पौण्ड १.६० डालर २.५०

Price (English or Hindi)
Rupees Eight only
£ 1.60 $ 2.50

प्रकाशक
विश्वधर्मशांति-सम्मेलन
सत्संग सदन, हनुमानपुरा
वाराणसी—२२१०१०

Printed by
Shivam Printers,
C. 27/273 Indian Press Colony,
Maldahia, Varanasi-221002

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

भूमिका

वेद हमारा प्राण है। उसका न आदि है, न अन्त। वह स्वयम्भू महादेवकी वाणी है। उसीसे समस्त प्रवृत्तियोंका जन्म हुआ। उसीमें सबकी निवृत्ति भी निहित है। जैसे सूर्यका प्रकाश देशी, विदेशी, जड़, चेतन, पृथ्वी-मंगल-वृहस्पति-शनैश्चर-बुध-शुक्र सभीके लिए है, वैसे ही वेदवाणी ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, वनवासी तथा विश्वभरके सभी प्राणियोंके लिए है। जात मात्रके कल्याणके लिए ही वह ऋषियोंके हृदयसे निकल कर देवोंको और फिर मनुष्योंको प्राप्त हुई।

इस दैवी वाक्के संरक्षकोंमें वैदिकोंका स्थान निस्संदेह महत्त्वपूर्ण है। जिनकी पीढ़ियोंपर पीढ़ियाँ श्रुतियोंको कण्ठाग्र करनेमें लगी रहीं, वे वश क्या विस्मरणीय हो सकते हैं? पाठक पढ़कर प्रसन्न होंगे कि पं० श्रीकृष्णदत्त जी भट्ट ऐसे ही वैदिक वंशमें उत्पन्न हुए हैं। महाकवि जगद्धर भट्टने अपनी 'स्तुति कुसुमांजलि' के अन्तमें अतीव वैदग्ध्यपूर्ण उक्ति द्वारा इस तथ्यकी ओर संकेत किया है।

ब्राह्मणत्वका आधान सहज भी है, और कठिन भी। पं० श्रीकृष्णदत्त जीके जीवनमें वह अनायास, आर्जवभावसे अवतरित हुआ है। ब्रह्ममें, विद्यामें, सदाचारमें, सच्चिन्तनमें, जन-निर्माणमें वे संस्कारवश संलग्न हुए और आजतक संलग्न हैं। 'परिणामत्रय संयमात् अतीत अनागत ज्ञानम्'—योग-सूत्र उनके उज्ज्वल भविष्यका संकेत दे रहा है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

वेदमें प्रेम, अहिंसा और मैत्रीकी खोज जिस पुस्तकका विषय हो, वह युगपुरुष महात्मा मोहनदास करमचन्द गांधी और उनके अन्यतम शिष्य आचार्य विनोवा भावेसे अनुप्राणित हो, ऐसा सहज संभव है। लेखकका जीवन इन दोनोंके सम्पर्कमें व्यतीत हुआ है और वह उनके विचार-प्रचारके साथ सक्रियरूपमें सम्बद्ध रहा है, यह सभीको ज्ञात है। मेरे संपर्कमें वे कुछ समयके लिए ही आये, पर यहाँसे लेकर प्रभुने उन्हें जिस पथका पथिक बनाया, वह उनकी ब्राह्मी वृत्तिके लिए मंगलमय सिद्ध हुआ।

पाठकोंको प्रस्तुत पुस्तकमें वेदकी वह मंत्रराशि मिलेगी जो आजके अर्थजर्जर जीवनके लिए प्राणदायिनी है। अहिंसा, प्रेम और मैत्री मानवताकी ऊर्ध्व भाव-शिखा हैं। उनके बिना मानव मानव नहीं है। उन्हें अपना कर ही उसकी मानवता चरितार्थ होती है। इस युग-के लिए वह पुनीत संदेश-वाहिका है। वेदापर आधृत उन्नयनकारिणी सामग्री देकर लेखकने अपने वंशगत पुनीत कर्तव्यका पालन किया है। इसके लिए मैं उन्हें साधुवाद देता हूँ।

मुंशीराम शर्मा

(एम. ए., पी. एच- डी., डी. लिट.)

भागवतम्, डी० ९।७०,
आर्यनगर, कानपुर
१९–५–७९

अनुक्रम

१. वेद-मन्त्रोंकी परिक्रमा	५
२. मंत्र और छन्दमय नवनीत	४१
३. मंत्रोंका भावार्थ—वेदामृत	९२

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

वेद-मंत्रोंकी परिक्रमा

कई वर्षोंसे खोज रहा हूँ वेदमें प्रेम, अहिंसा, और मैत्री।

पर, कहाँ विश्वकी प्राचीनतम पवित्रतम ज्ञानराशि—वेद, और कहां मैं, जिसे वेदवाणीका, देववाणीका, उसके व्याकरण तकका ट ट प प भी नहीं आता!

मैंने इस सुभाषितपर भी ध्यान नहीं दिया :

यद्यपि बहुनाधीषे तथापि पठ पुत्र व्याकरणम्।
स्वजनः श्वजनो मा भूत् सकलः शकलः सकृत् शकृत्॥

'बेटे, तू अधिक नहीं, तो कमसे कम व्याकरण तो पढ़ ले, जिससे कहीं तू 'स्वजन' (सम्बन्धी) को 'श्वजन' (कुत्ता), 'सकल' (सम्पूर्ण) को 'शकल' (टुकड़ा) और 'सकृत' (एक बार) को 'शकृत्' (मल) न समझ बैठे।'

इसके अतिरिक्त भी पांच-पांच बाधाएँ मेरे मार्गमें आकर खड़ी हैं—

१. वेद मंत्र हैं तपोपूत ऋषियोंके समाधि जैसी स्थितिके उद्‌गार। 'इलहाम' जैसी अवस्थाके दिव्य सन्देश। उसी प्रकारकी उच्च और दिव्य स्थितिको पहुँचे बिना कौन समझ पायेगा ऋषियोंकी मूल भावनाको ?[1]

२. वेद मंत्रोंकी परम प्राचीन वैदिक संस्कृत, जिसका अपना निराला सौष्ठव है, लौकिक संस्कृत कहां पा सकेगी उसे ? उस प्राचीन भाषाको आज कौन ठीक-ठीक समझेगा ?

---

१. न ह्येषु प्रत्यक्षमस्ति अनृषेः अतपसो वा। —यास्कः निरुक्त १३।११

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

३. वेद-मंत्रोंके एक-एक शब्दके अनेक पर्याय।[2] उस प्राचीनतम कालमें किस शब्दका किस अर्थमें प्रयोग किया गया, कौन जानता है ?

४. प्रत्येक ऋचाके आध्यात्मिक, आधिदैविक और आधिभौतिक—ऐसे तीन-तीन प्रकार के अर्थ।[3]

५. छठी शताब्दीसे बीसवीं शताब्दीतक अनेक भाष्यकारोंके अपने-अपने ढंगके भाष्य। स्कन्दस्वामी कुछ अर्थ करते हैं, वेंकट-माधव कुछ। स्वामी आनन्दतीर्थ कुछ अर्थ करते हैं, सायणाचार्य कुछ। स्वामी दयानन्द, योगी अरविन्द, कपाली शास्त्री, श्रीपाद दामोदर सातवलेकर आदि भाष्यकारोंकी अपनी अपनी अलग छटा है। मैक्समूलर, विल्सन, ग्रिफिथ, ह्विटनी, स्टीवेन्सन, ब्लूमफील्ड, ओल्डनबर्ग, मैकडोनल, जैकोबी, केगी आदि अनेक पाश्चात्य भाष्यकार अपने-अपने ढंगपर भाष्य करते हैं। कोई अर्थ आकाशकी ओर खींचता है, कोई पातालकी ओर।

कितना अथक परिश्रम किया है वेदके इन विद्वानोंने वेदार्थ खोजनेमें, देखकर आश्चर्य तो होता ही है, कृतज्ञतासे हमारा मस्तक भी नत हो उठता है।

पर समस्या यही है कि भिन्न-भिन्न दीखनेवाले इन भाष्योंमें सर्वशुद्ध अर्थ किसका है ? इसकी गारण्टी कौन दे सकता है ? अमुक भाष्य एकांगी है, अमुक कर्मकाण्डपरक है, अमुकमें वैदिक शब्दोंको यौगिक मानकर अनेक स्थलोंपर अर्थमें मनमानी खींचातानी की गयी है—ऐसे अनेक अभिप्राय मेरे सामने हैं।

देखकर हैरान हूँ मैं, किंकर्तव्यविमूढ़ !

---

२. सामान्यतया मंत्राणां सूक्तानां तात्पर्ये क्वेऽपि क्वचिदनेकार्थतापि न विरुध्यते। —स्वामी करपात्री : वेदार्थ पारिजात, पृष्ठ १०४१

३. तथैवाध्यात्माधिदेवाधिभूतादि भेदेनैतिहासिकादि भेदेन चार्थभेदोऽपि नानुचितः।—वही, पृष्ठ १०४१

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अब एक ही उपाय रह जाता है मेरे पास कि मैं वेद-माताके चरणोंमें प्रार्थना करूँ—स्तुता मया वरदा वेदमाता।[१]

ओ वरदात्री मां, तू अपने सुधासागरसे मुझे एकाध बूंद भी नहीं देगी क्या ? मांके द्वारसे भी कोई निराश होकर लौटता है ?

मांका आशीर्वचन है—ऋचो अक्षरे परमे व्योमन्।[२]

'क्यों हताश होता है तू ? वेदका एक ही अक्षर जान ले तो तेरा बेड़ा पार है—

एकः शब्दः सम्यक् ज्ञातः सुप्रयुक्तः।
स्वर्गे मर्त्ये च कामधुग् भवति॥

आइये, आप हम ॐ से लेकर शांतिः तक वेदके मंत्रोंकी एक परिक्रमा कर लें।

ॐ ॐ ॐ

वेद में एक अक्षर है—ॐ।
सर्वश्रेष्ठ, सर्वोत्तम अक्षर—ॐ।
वेद कहता है—ॐ खं ब्रह्म ।[3]

ॐ ही सर्वव्यापी ब्रह्म है। ऋषियोंकी मान्यता है कि ॐ ही परम अक्षर है। ॐ ही परमेश्वर है। ॐ ही वायु है। ॐ ही अग्नि है। ॐ ही सविता है। ॐ ही ऋत है। ॐ ही सत है। ॐ ही अदिति है। ॐ से बढ़कर कोई मंत्र नहीं। अक्षर रूपमें वेदकी ऋचाओंमें ॐ ही तो प्रतिष्ठित है!

परमेश्वरका सबसे उत्तम, सबसे श्रेष्ठ, सबसे पवित्र नाम है—ॐ।

आचार्य विनोबा भावे ॐ की विवेचना करते हुए कहते हैं—

---

१. अथर्व वेद, १९।७१।१। २. ऋग्वेद, १।१६४।३९। ३. यजुर्वेद, ४०।१७।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

"ऋषियोंने ध्यानके लिए ॐकारका सर्वश्रेष्ठ आलम्बन पसन्द किया। ॐकार सर्व-सहिष्णु है। उसे भली बुरी सभी ध्वनियाँ सहन हो सकती हैं। उसके विश्वसंवादी नादमें अनेक विसंवादी स्वर खप जाते हैं।"[१]

अ, उ, म—ॐ की इन तीन मात्राओंकी व्याख्या करते हुए विनोबा कहते हैं[२]—

अ उ म—ये ही हैं वाक्‌देवीके तीन रूप—परा, पश्यन्ती और मध्यमा।[३]

ये ही हैं—त्र्यम्बकके तीन नेत्र।[४]

ये ही हैं—विष्णुके तीन पाद।[५]

ये ही हैं—त्रिदेवि—इळा, भारती और सरस्वती।[६]

ये ही हैं भू:भुवः स्वः—पृथ्वी, अन्तरिक्ष और द्यौ-लोक।[७]

यजुर्वेदके अन्तिम तीन मंत्रोंमें वायु, अग्नि और सविताको अ, उ, म, बताते हुए विनोबा और गहराईमें उतरते हैं। कहते हैं—'इन तीनसे परेकी आधी मात्राके निर्दिष्ट किये बिना उपासना पूरी नहीं होती। इसकी पूर्तिके लिए आकाशकी अनासक्ति और अविरोधी वृत्ति, उसकी परम शान्तिके विशिष्ट गुणको देखकर ॐ और ब्रह्म के बीचमें 'ख' को बैठाया गया है। 'ॐ खं ब्रह्म' और 'ॐ शांतिः', ये पर्याय ही सिद्ध होते हैं।[८]

अदितिका[९] काव्यात्मक वर्णन करते हुए विनोबा कहते हैं—"विश्व-के सब टुकड़ोंको सीकर अखण्ड रूप देनेवाली जो शक्ति प्राणिमात्रमें

---

१. विनोबा : उपनिषदोंका अध्ययन, १९६१, पृष्ठ १-२७। २. वही, पृष्ठ ८८-८९, ५५-५६। ३. ऋग्वेद १।१६४।४५ ४. ऋग्वेद ७।५९।१२। ५. ऋग्वेद १।२२।१८। ६. ऋग्वेद ३।४।८ ७. अथर्ववेद १९।९।१४। ८. विनोबा : वही, पृष्ठ ८१-८५। ९. ऋग्वेद १।८९।१०।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

काम कर रही है, वही है—अ–दिति। वह है, प्रेमल करुणा। वही है सार्वभौम अहिंसा।"[1]

यह माता अदिति ॐ से भिन्न थोड़े ही है—

ॐ ब्रह्म अग्नी ऋत सत या तुझे कहें हम मा अदिती।
द्वेषमुक्ति दे हमें प्रभू तू, जिससे सब सुख पाते हैं।[2]

ॐ की इस साधनाकी ओर ऋषियोंका ध्यान कैसे आकृष्ट हुआ, इसके लिए जब हम वेदके अंतस्‌को टटोलते हैं तो यह पाते हैं कि सृष्टिके सुन्दर स्वरूपका दर्शन करके ऋषि सोचने लगे—

जिसकी रचना इतनी सुन्दर, वह खुद कितना सुन्दर होगा!

इस सौंदर्यने ऋषियोंको उस सत्यं, शिवं, सुन्दरम्‌की ओर प्रेरित किया, उनके मानसमें वह प्रेमस्वरूप उतर आया और उसने प्रेमकी वह मधुर वंशी बजायी कि वैदिक ऋषि प्रेम-सागरमें डूब गये। उन्होंने वैयक्तिक, सामाजिक, आर्थिक सभी क्षेत्रोंमें प्रेमकी पवित्र मन्दाकिनी प्रवाहित की। उस सरितामें अवगाहन करनेसे शांति, परम शांति प्राप्त होती है। विश्व-शान्तिकी अनुपम भावना भरी है वैदिक ऋषियोंकी पवित्र वाणीमें।

कैसा सुन्दर काव्य प्रभूका!

पर्वत! सागर! नदियाँ!

सभीकी अनोखी निराली शोभा।

हरी-भरी वृक्षावलीसे सुसज्जित पर्वतोंकी गुफाएँ अनन्त कालसे ऋषियोंकी तपोभूमि रही हैं। प्रकृतिके मनोरम अंचलमें, पर्वतोंकी गुहाओंमें, समुद्र अथवा सरिताओंके तटपर जन्म लेनेवाले, वहींपर पलनेवाले ज्ञानी विप्र बचपनसे ही अनुभव करने लगते हैं कि उनके

---

१. विनोबा वही, पृष्ठ ३७-३८। २. ऋग्वेद २।२७।७।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

चारों ओर बिखरी सृष्टि कितनी मनमोहक है। कितनी सुन्दर, कितनी आनन्द-दायक, नितनूतन—प्रतिक्षणं नवनवतामुपैति—Ever green, अजर, अमर।

आरण्यक संस्कृतिके जन्मदाता ये ऋषि अरण्यानी देवीकी वन्दना करते हुए नहीं अघाते। अरण्योंमें कहीं गौएँ चर रही हैं, कहीं बैल, जिनकी मंगल-ध्वनिमें उन्हें वीणावादनका स्वर गूँजता सुनाई पड़ता है। कहीं हिरण किलोलें कर रहे हैं। मृगनाभिकी कस्तूरी उन्हें मुग्ध करती है।

और 'द्यौकी बेटी परम सुन्दरी ऊषा रानी विभावरी!'

सूर्योदय और सूर्यास्तकी सुषुमा, तारोंसे जगमगाती रात्रि, ग्रीष्म, वर्षा, शरद, शिशिर, हेमन्त, वसन्त—सभी ऋतुओंकी अपनी-अपनी शोभा—उन्हें सतत उत्फुल्ल करती है। वे अनुभव करते हैं—

सुबह उठते नजर आती हमें ऊषाकी लाली है।
गगनमें रातमें सजती सितारोंकी दिवाली है॥
कहीं गेंदा, कहीं जूही, चमेलीकी बहारें हैं।
जहाँके इस चमनकी तो अजब शोभा निराली है॥

और वर्षाकालमें उमड़-घुमड़कर आनेवाले मेघ?

कुछ ठिकाना है उनके सौन्दर्यका?

श्यामल घटाओंको देखते ही, जब हमारा राष्ट्रीय पक्षी मयूर अपने रंग-विरंगे पंखोंको फुलाकर झूम-झूमकर नाच उठता है, तो ऋषियोंका मन-मयूर क्यों नहीं नाचेगा?

और वह इन्द्रधनुष?

बैंगनी, नीला, आसमानी, हरा, पीला, नारंगी और लाल—इन सात रंगोंकी तूलिकासे रंगा सतरंगी इन्द्रधनुष? क्या केवल वर्ड्सवर्थ-के हृदयको ही बचपनसे बुढ़ापेतक सतत उछालता रहता था?

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

My heart leaps up when I behold
A rainbow in the sky!

जी नहीं। शताब्दियों पहलेसे हमारे ऋषि उसे देखकर आनन्द-में मत्त हो उठते थे।

चारों ओर सौन्दर्यका यह सागर लहरा रहा है।

आकाशके तारे, धरतीके फूल!

वृक्ष और लताएँ, पशु और पक्षी, मोर और कोयल, भौंरे और तितलियाँ—कीड़ी-कुंजर, जलचर, थलचर, नभचर—सभी तो सुन्दरतामें होड़ लगाये बैठे हैं।

रूप और रसकी यह हाट अनन्त कालसे लगी है। प्रकृतिकी गोटीमें सौंदर्यका जो खजाना भरा पड़ा है, उसके आनन्दका लाभ उठानेके लिए कौन आतुर नहीं?

पण्डित गोपीनाथ कविराज कहते हैं—'भँवर एक पुष्पसे दूसरे पुष्पकी ओर दौड़ता है—रसकी आकांक्षासे। लोग जहाँ सौन्दर्य देखते हैं, दौड़ पड़ते हैं। सभीको रसकी प्यास है। इसके बिना प्राणी जी नहीं सकता।'[1]

योगिराज हरिप्रसाद शास्त्रीकी भी यही अनुभूति है—'सभी लोग सौंदर्यके प्रेमी हैं। कोई प्रकृतिके सौंदर्यका प्रेमी है, तो कोई सुन्दर चित्रोंका। कोई सुन्दर काव्यका प्रमी है, तो कोई संगीतका। कोई उत्तम चारित्र्यके सौन्दर्यका प्रेमी है, तो कोई शिशुपनके सारल्यका। पर यह सारा सौन्दर्य हाथ छुडाकर भाग जाता है। ये सौन्दर्य-पिपासु जानते नहीं कि यह बाह्य सौंदर्य हृदयके भीतर बसनेवाले परम-प्रभु-का ही सौन्दर्य है, जो समुद्रकी तरंगोंके रूपमें, हरी-भरी घासके

---

१. गोपीनाथ कविराज : भारतीय संस्कृति और साधना, खण्ड २, पृ० २९८।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

रूपमें, कल-कलवाहिनी नदियोंके रूपमें, आकाशके रूपमें, पुष्पोंके रूपमें, पर्वतों और सभी सुन्दर वस्तुओंके रूपमें छविमान हो रहा है। सारा विश्व, सारी सृष्टि उस 'बियुटी एबसोल्यूट'-(Beauty Absolute) परम सौन्दर्यवान्—का ही तो सौन्दर्य है।[1]

सौन्दर्यका जादू सारे विश्वपर छाया हुआ है—पूर्वसे पश्चिम तक, उत्तरसे दक्षिणतक। पाश्चात्य साहित्यमें तो तीन बुनियादी मूल्य ही मान लिये गये हैं—'सत्यं, शिवं, सुन्दरम्।' स्पिनोजा हो या एक्वीनास, मोटैन हो या गिल्ट, काण्ट हो या सुकरात, अफलातून हो या दास्तोवस्की, तोल्सतोय हो या शेक्सपियर, शैली हो या वर्ड्सवर्थ, टैनीसन हो या और कोई—सभीने सृष्टिके सौन्दर्यसे लेकर विचारोंके सौन्दर्यतक, ऋतुके सौन्दर्यसे लेकर परम प्रभुके अनुपम सौन्दर्यतक अपने-अपने ढंगपर अपनी कल्पना दौड़ायी है और उसमें विभोर हो उठे हैं।[2]

इस सौंदर्य-साधनामें हमारे वैदिक ऋषि अग्रगण्य हैं। वे, प्रकृतिके सौंदर्यपर ही मुग्ध होकर नहीं बैठ गये। इस काव्यके कलाकारको, इस चित्रके चित्रकारको खोजनेमें भी वे जी-जानसे तत्पर हो गये। वे प्रकृतिसे पुरुषकी ओर बढ़ते चले गये। राधाकृष्णन् कहते हैं—'वैदिक सूक्तोंके प्राचीनतम ऋषि प्राकृतिक दृश्योंको देखकर अपने सरल स्वभावके कारण अनायास ही अत्यन्त उत्फुल्लित हो उठते थे। विशेषकर कविस्वभाव होनेके कारण उन्होंने प्राकृतिक पदार्थोंको ऐसे प्रगाढ़ मनोभावों और कल्पनाशक्तिद्वारा देखा कि उन्हें वे आत्माकी

---

१. हरिप्रसाद शास्त्री : मैडिटेशन, पृष्ठ १६

२. एनसाइक्लोपीडिया ब्रिटानिका—दि ग्रेट आइडियाज, खण्ड १, ए सिंटोपिकन आफ ग्रेट बुक्स आफ दि वैस्टर्न वर्ल्ड, अध्याय—'ब्यूटी' पृष्ठ ११२-११८

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

भावनासे परिपूर्ण प्रतीत होने लगे। वे प्रकृति-प्रेमसे अभिज्ञ थे और इसलिए सूर्योदय और सूर्यास्तके अद्भुत दृश्योंमें खो गये, क्योंकि ये दोनों ही रहस्यमयी घटनाएं हैं, जो आत्माको प्रकृतिके साथ जोड़ देती हैं। उनके लिए प्रकृति एक जीवित सत्ता थी, जिसके साथ वे प्रेम-सम्बन्ध जोड़ सकते थे।'[१]

सौंदर्यकी ओर आकृष्ट होना प्राणिमात्रका सहज स्वभाव है, पर यदि बिन्दु हमें सागरकी ओर आकृष्ट न करे, तो बिन्दुके सौंदर्यकी महत्ता ही क्या? कविराज गोपीनाथ इसीलिए कहते हैं—"एक सौंदर्य ही जब जगतमें नाना सौंदर्योंके रूपमें प्रकाशमान है, तब जगत सौंदर्यसार है, यह जाना जा सकता है। किन्तु चित्तमें मल और चांचल्य रहनेसे देखनेके समय यह अनुभूति नहीं होती। जिस ओर ताकें, उसी ओर यदि हम सौंदर्य न देख पायें, जिसको देखें, उसीको यदि प्यार न कर सकें, तो रस-साधनाकी सिद्धि नहीं हुई।"[२]

वैदिक ऋषियोंने यह सौंदर्य-साधना की थी। जम कर की थी। सौंदर्यानुभूतिपर गद्गद् होते हुए वेदके दीर्घकालीन अभ्यासी डाक्टर सी० कन्हनराजा अनेक प्रमाणोंद्वारा सिद्ध करते हैं कि—

"They found beauty, they created beauty, they loved beauty, they lived a life of beauty in a world and in an environment of art and beauty"[3].

'उन ऋषियोंने सौंदर्यको खोज निकाला। उन्होंने सौंदर्यकी रचना की। वे सौंदर्यसे प्रेम करते थे। कला और सौंदर्य-मय वातावरण में वे सौंदर्यमय जीवन जीते थे।'

---

१. सर्वपल्ली राधाकृष्णन् : भारतीय दर्शन, प्रथम खण्ड, पृष्ठ ६५
२. गोपीनाथ कविराज : भारतीय संस्कृति और साधना, खण्ड २, पृष्ठ ३१८
३. सी० कन्हनराजा : वेदाज, १९५७, पृष्ठ १९०

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

वैदिक ऋषि सृष्टिके कण-कणमें उस अनन्त रूपराशिके दर्शन करते थे। अनेक ऋचाओंमें उनके कविहृदयकी यही भावना गुंजन कर रही है—.

रूपराशि तू सुन्दरताकी, सुन्दरतम सुन्दरतर सुन्दर।
तू ही सत्य, तुही शिवं है, और कौन तुझसे सुन्दर।।

तू सुन्दर, तेरी सृष्टी सुन्दर, पर्वत सुन्दर, निर्झर सुन्दर।
द्यौ सुन्दर है, अन्तरिक्ष भी, पृथ्वीका कण-कण सुन्दर।।

ऊषा सुन्दर, सन्ध्या सुन्दर, तारखचित रजनी सुन्दर।
सूरज चन्दा और तारागण, एक-एक से हैं, सुन्दर।।

जलचर सुन्दर, नभचर सुन्दर, थलचर भी हैं अति सुन्दर।
जिधर दृष्टि हम डालें—पाते, सभी वस्तुएं हैं सुन्दर।।

घुमा फिराकर एक ही बात—काव्य सुन्दर, उसका रचयिता कवि सुन्दर, परम सुन्दर।

Every thing is full of beauty
God is beautiful.

कस्मै देवाय ?

सागरका गर्जन, प्रपातका संगीत, कोयलोंका कूजन. पपीहोंका 'पी कहां', सिंहों-चीतोंकी दहाड़, हाथियोंकी चिंघाड़, गौओंका रँभाना, घोड़ोंका हिनहिनाना, बन्दरोंकी चीं-चीं, चूहोंकी चूं-चूं, बिल्लियोंकी म्याऊं-म्याऊं, फाख्ताकी कूं-कूं, बत्तखोंकी कें-कें, मेढ़कोंका टर्राना, भेड़-बकरियोंका मिमियाना, भौंरोंका गुनगुनाना, मक्खियोंका भिनभिनाना, पक्षियोंका चहचहाना—किसने नहीं सुना ? असंख्य प्राणी, असंख्य नाद। गुरु नानक चकित होकर गाते हैं—

सो दरु केहा सो घरु केहा, जितु बहि सरब समाले।।
बाजे नाद अनेक असंखा, केते वावणहारे।।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

केते राग परी सिउ कहीअन, केते गावणहारे ।
गावहि तुहनो पउणु पाणी, बैसंतरु राजा धरमु दुआरे ॥....

उधर वह वर्ड्सवर्थ आध घण्टेसे परख रहा है—उस छोटी-सी रंग-विरंगी तितलीको, जो पीले पुष्पमें आत्मविभोर हो रही है। कहता है—

'I have watched you now a full half hour self-poised upon that yellow flower, little butterfly !

इधर हमारे ऋषि उस नीली-हरी-लाल तितलीको देखकर गद्गद् होकर गा रहे हैं—नीलः पतंगो हरितो लोहिताक्षः ।

वर्ड्सवर्थको तो छोटेसे छोटे पुष्पमें भी उस अनन्त रूपराशिके दर्शन होते हैं और आंसू निकल पड़ते हैं—

'To me the meanest flower that blows is too deep for tears'.

तो शैली, गुलाबकी पंखुड़ियोंपर पंखुड़ियां उघेलता हुआ, उसके सौंदर्यमें प्रेमानुभूति कर रहा है—

And the rose like a nymph to the bath addresst,
Which unveiled the depth of her glowing breast,
Till fold after fold, to the fainting air,
The soul of her beauty and love lay bare !

और टेनीसन ?

धीरे-धीरे दो-तीन बार 'टेनीसन' 'टेनीसन' (अपना नाम ही) दोहराता है और डूब जाता है भावसमाधिमें, आनन्दके सागरमें ।[1]

जब आधुनिक कवियोंका यह हाल है, तब हमारे प्राचीन वैदिक कवियोंकी भाव-विभोरताकी तो सहज ही कल्पना की जा सकती है ।

---

१. लाइफ आफ टेनीसन, खण्ड १, पृष्ठ ३२०

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

शब्द रूप रस गंधमयी इस सारी सृष्टीको लखकर।
सहज प्रश्न उठता मानसमें—'कौन रचयिता है इसका ?'

रचयिताकी खोजमें डूबकर वे 'हिरण्यगर्भः समवर्तताग्रे' आदि कहकर उस परम प्रभुकी अर्चनामें तल्लीन हो उठते हैं, तो इसमें आश्चर्य ही क्या है ? वे कह उठते हैं—

किस देवाका करूं मैं अर्चन तुझे छोड़कर परम प्रभो ?
द्यावा पृथ्वी अन्तरिक्ष नभ सबका तू आधार प्रभो।
सूर्य चन्द्र चक्षू हैं ब्रह्मन, अग्निदेव है मुख तेरा।
श्रद्धासे नतमस्तक हो, करते प्रणाम हम तुझे प्रभो।।

और ये कवि उस अनन्त शक्तिशाली, अनन्त सौंदर्यवान प्रभुसे मांगते क्या हैं ? वे उससे मांगते हैं—मुक्ति—सारी कामनाओं और वासनाओंसे मुक्ति। वे मांगते हैं, उस आनन्द-लोकका निवास, जहाँ आठ-पहर चौंसठ घड़ी आनन्द ही आनन्द है।

मोद और आनन्द दिव्यसे पूर्ण लोक रहता है जो।
उसी कामना-शून्य क्षेत्र में हमको ले चल परम प्रभो।।

सबमें रमता राम तुही

ऋषियोंका अनुसन्धान चलता रहा, चलता रहा। हृदयकी गहन गुफामें प्रवेश कर उन्होंने खोज लिया उस परम ब्रह्मको, उस परमेश्वर-को—जो अकाय है, अव्रण है, अस्नाविर है, शुद्ध है, पवित्र है, अकाम है, निष्काम है, परिभू है, स्वयंभू है, सबमें व्याप्त है। अनन्त शीर्ष हैं उस परमेश्वरके, अनन्त नेत्र, अनन्त भुजाएं ! अनन्त नाम, अनन्त रूप !

कोई उसे 'इन्द्र' कहता है, तो कोई 'सविता'। कोई उसे 'अग्नि' कहता है, तो कोई 'पूषन्'। कोई उसे 'बृहस्पति' कहता है, तो कोई 'वाचस्पति'। कोई 'गरुत्मान' कहता है, तो कोई 'सुपर्ण'।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

पर रहें अनन्त नाम-रूप उस परमेश्वरके, ऋषियोंने इस तथ्यको बार-बार अनेक ऋचाओंमें गाया कि सबके भीतर एक ही परम सत्ता-का आलोक जगमगा रहा है।

नाम रूप तेरे अनन्त हैं, करते हम बन्दन तेरा।
कवि ज्ञानी कहते इक स्वरसे, सबमें रमता राम तुही॥

तू मेरा है, मैं तेरा

ऋषियोंने सौंदर्यपूरित सृष्टिके अनुपम सृष्टाको जा पकड़ा। काव्य-से कवितक, कलासे कलाकारतक वे जा पहुँचे। उन्होंने अनुभव किया कि सारे जगतमें उस परम प्रभुका ही पसारा है। सर्वत्र वह सर्वव्यापी परमेश्वर ही छाया है।

जिज्ञासु पूछता है—'माना, परमेश्वर सर्व-व्यापक है, सबका स्वामी है, सर्व-समर्थ है—पर हमारा उससे क्या वास्ता ?'

ऋषि कहते हैं—वास्ता पूरा है। वह प्रभु तो 'अपना' है—एकदम अपना। वह कोई दण्डाधिकारी नहीं है। वह हाथमें डंडा लेकर बैठा कोई गुरु-गम्भीर स्कूल-मास्टर नहीं है। वह आँखें तरेरनेवाला मालिक नहीं है। भारतीय विचारधारामें ऐसे गुरु-गम्भीर प्रभुकी कोई कल्पना ही नहीं है—

"No where in the entire region of Indian thought there is any reference to the severe, cold and hard majestic sovereign. Such a concept of God is quite alien to it.[1]

वह परमेश्वर हमारा परम आत्मीय है। ऋषि उससे कहते हैं—

'त्वमस्माकं तव स्मसि।'—'तू मेरा, मैं तेरा।'

---

१. एस० जी० भगत : एनश्येण्ट इंडियन एसेटिसिज्म, १९७६, पृष्ठ ७४

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

स्वामी रामतीर्थ इस तथ्यकी अनुभूति करते हुए कहते हैं—

तारे क्या रोशनीसे न्यारे हैं ?
तुम हमारे हो, हम तुम्हारे हैं ॥

वह प्रभु हमारा है। स्वामि-सखा-पितु-मातु-गुरु—चाहे जिस नातेसे हम उसे पुकारें, चाहे उसे माँ कहें, चाहे पिता; बाप कहें, चाहे बेटा; सखा कहें, चाहे मित्र; स्वामी कहें, चाहे सेवक—सब सम्बोधनोंसे उसका एक ही उत्तर मिलेगा—'ॐ'—'हूँ' !

इस आत्मीयताके बाद पार्थक्यकी कोई गुंजाइश रहती ही कहाँ है ?

इस आत्मीयताकी बात ऋषियोंने अनेक ऋचाओंमें दोहरायी है—

तूही माता तुही पिता है, बन्धु सखा है प्रभो तुही।
जितने नाते हैं इस जगमें, सब नातोंमें बसा तुही ॥

कृपा मांगते हैं हम तेरी, तू सबका कल्याण करे।
तुझसे बढ़कर हितू कौन है ?—स्नेही प्यारा एक तुही ॥

सबका प्यारा बन जाऊँ !

खूं रगे मजनूंसे निकला, फस्द जो लैलीकी ली।
चोट इधर लगती है, दर्द उधर होता है !

सांट भैंसेकी पीठपर मारी जाती है, उछरती है वह संतकी पीठपर।

प्रेमकी यह सिफत है कि प्रेमी और प्रेमास्पदमें भेद नहीं रह जाता। दोनोंमें परम तादात्म्य हो जाता है।

ऋषियोंने प्रभुके साथ अपने इस तादात्म्यकी अनुभूति की। वे जब समाधिमें होते, तो हृदयमें उस प्रभुके दर्शन करते, जागते तो अपने आसपास चराचर सृष्टिमें उस 'पवित्राणां पवित्रम्' के दर्शन करते। विद्वद्वर माहुलीने कैसा भव्य वर्णन किया है इस दिव्य स्थितिका—

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

'Their knowledge enables them to bathe the world in divine love. Their heart is entranced with joy exalted to beautitude. Every thing appears to them apparalled in divine love....Vedic seer is saturated with love for God. From dawn to dusk, day in day out he may be absorbed in SAMADHI or out of it. All is one with him. When he is in Yogic trance, he sees God in his own heart. when out of it, he sees Him in the Universe and in every part of it. Every living as well as lifeless thing is a SANCTUM SANCTORUM for him.'[1]

अर्थात् 'वैदिक ऋषियोंका ज्ञान सारे संसारको प्रभु-प्रेममें नहलानेकी क्षमता रखता है। उनका हृदय आनन्द और सौंदर्यसे ओतप्रोत रहता है। उन्हें प्रत्येक वस्तु ईश्वरीय प्रेममें डूबी दिखाई पड़ती है।....वैदिक ऋषि ईश्वरीय प्रेममें आकण्ठ निमग्न रहता है। ऊषासे संध्यातक, रात और दिन, या तो वह समाधिमें रहता है या चैतन्यावस्थामें। जब यौगिक समाधिमें होता है, तो वह अपने अन्तस्तलमें प्रतिष्ठित परमेश्वरके दर्शन करता है। जब चैतन्यावस्थामें रहता है, तो सारी सृष्टिमें, प्रत्येक जड़ और चेतन वस्तुमें उसे उस परम पवित्र प्रभुकी झांकी दीख पड़ती है।'

ऋषियोंका रोम-रोम पुकारता है—

जर्रे जर्रेमें नुमायां है तेरी शाने वजूद।
पत्ते-पत्तेसे तेरा यार पता मिलता है!!

---

१. माहुली आर० गोपालाचार्य : दि हार्ट ऑफ दि रिग्वेद, १९७१, प्रस्तावना, पृष्ठ १३-१४।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

जड़-चेतनमें, पशु-पक्षीमें, कीड़ी-कुंजरमें, नर-नारीमें, बाल-वृद्धमें, छोटे-बड़ेमें तू ही तो व्याप्त है। और तू क्यों, सबमें 'मैं' ही हूँ—तू ही मैं, मैं ही तू!

भगत रैदासकी दिव्य अनुभूति है—

प्रभुजी तुम चन्दन हम पानी, जाकी अंग-अंग बास समानी।

उधर रैदासको शरीरके अंग-अंगमें प्रभुके दिव्य सौरभकी महक आ रही है, इधर विश्वकवि रवीन्द्रनाथ ठाकुरको सर्वत्र दिव्य प्रकाश दीख रहा है—

आमार मध्ये तोमार प्रकाश, ताई एतो मधुर।

मानव सबसे अधिक अपनेको प्यार करता है। क्यों?

इसीलिए न कि प्रभु उसकी आत्माके भीतर जगमगा रहा है। सभी दीपकोंमें एक ही तेल भरा है। सभी लट्टुओंमें एक ही डायनेमोसे प्रकाश आ रहा है।

ऐसी स्थितिपर पहुँचे ऋषि सबसे प्रेम करनेके सिवा और कर ही क्या सकते थे? आत्मा-आत्मासे मिलनेको आकुल है। अनेक ऋचाओंमें वैदिक ऋषि प्रभुसे प्रार्थना कर रहे हैं कि 'तू हमें सबका प्यारा बना दे—सारी प्रजाका, सारे मनुष्योंका, सारे प्राणियोंका।'

और यहीं तक क्यों? ऋतमय, सतमय जीवन बितानेवाले ऋषि यह तक कह रहे हैं कि 'जो लोग भोगोंमें रचपच रहे हैं, उन्हें हम अच्छा तो न मानें, फिर भी हमारा प्रेम उनपर भी बरसता रहे।'

पृथ्वी मातासे ऋषि प्रार्थना करते हैं कि वह हमारी वाणीमें मधु घोल दे, ताकि हम सबके प्यारे बन जायें—

पृथ्वी माता तुझपर रहते जितने प्राणी हैं जग में।
वे सब हमसे प्रेम करें, हम सबके प्यारे बन जावें॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

हिंसा करनी नहीं किसीकी

Love like light embraces every thing.

स्वामी रामतीर्थ कहते हैं कि 'प्रकाश जिस प्रकार सभीको अपने हृदयसे चिपटा लेता है, उसी प्रकार प्रेम सभीको अपने गले लगा लेता है।'

जहां प्रेम है, प्यार है, मुहब्बत हैं—वहां कैसा द्वेष? कैसी घृणा? कैसा क्रोध? कैसा मोह? कैसा शोक?

हिंसाका वहाँ प्रश्न ही कहाँ उठता है?

जब सब प्राणियोंमें मैं ही हूं, मेरी ही आत्मा सबमें क्रीड़ा कर रही हैं, तब किसीको मारनेकी, किसीको सतानेकी कल्पना भी कैसे की जा सकती हैं?

वैदिक ऋषि इसीसे कहते हैं—'मां हिंसी पुरुषं जगत।'

किसी भी व्यक्तिको, किसी भी पुरुषको, किसी भी प्राणीको मत सताओ। न तनसे, न वचनसे, न मनसे।

यज्ञपरक अनेक मंत्रोंके अर्थके सम्बन्धमें भाष्यकारोंमें बड़ा मतभेद है। कुछ विद्वानोंका मत है कि यास्काचार्यकी निरुक्तके अनुसार—

अध्वर इति यज्ञ नाम ध्वरति हिंसाकर्मा तत्प्रतिषेधः।[1]

'यज्ञ हिंसा और अधर्मसे रहित होते थे।' कुछका मत है कि यज्ञोंमें पशुबलि आदिका विधान था। वे कहते हैं—'वैदिकी हिंसा हिंसा न भवति।'

यजुर्वेदमें कर्मकाण्डपरक अनेक मंत्र हैं। वहाँ भी अग्निदेवसे बार-बार प्रार्थना की गयी है कि वे किसी पुरुषको, किसी प्राणीको,

---

१. यास्क : निरुक्त १।८

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

'किसी दो पैरवाले पशुको या चार पैरवाले पशुको, एक खुरवालेको अथवा अनेक खुरवाले पशुको न सतावें या मारें।'

सम्भव है कि वैदिक युगके आरम्भमें पशु-बलि आदिका प्रचलन रहा हो, परन्तु उस समय भी कुछ सम्प्रदाय ऐसे थे, जो पशुहिंसा का विरोध करते थे। कुछ वैदिक मंत्रोंमें भी हिंसाके विरोधके उदाहरण मिलते हैं।[1]

अमृत-नाभिवाली परम पवित्र गौ तो वैदिक कालके आरम्भमें ही 'अवध्या' मान ली गयी थी। और केवल गौ ही नहीं, सारे पशुओंकी, सारे प्राणियोंकी हिंसाका निषेध है। अनेक ऋचाओंके मूलमें यही भाव भरा है—

हिंसा करनी नहीं किसीकी, कोई भी हो प्राणी।
पूर्णरूपसे इस जीवनमें, हमें अहिंसा लानी॥

सच्चे मित्र हमें दे प्रभु तू

प्रेम और मैत्रीका एक उत्तम साधन है—सख्य भाव।

दोस्ती और किसी गरजके लिए,
वह तिजारत है, दोस्ती ही नहीं!

कितना पवित्र शब्द है—सखा, मित्र, दोस्त।

भरे रहें घरमें लाख लोग, बाहर भी हजारों हों परिचित, पर यदि कोई सखा न हो, कोई मित्र न हो, तो यह सारी जमात—'भीड़' ही मानी जायगी।

जिससे हम खुलकर मिल सकें, जिसके सामने हम बिना किसी दुराव-के, बिना किसी संकोचके, अपना हृदय उंडेल सकें, दिलकी बात कह सकें, जिसकी मैत्रीमें कोई स्वार्थ न हो, जो सुख-दुखमें सदैव साथ रहे

---

१. राधाकृष्णन : भारतीय दर्शन, खण्ड १, पृष्ठ ९७-९८

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

और सदैव हितचिन्तन करता रहे,—ऐसा सखा, ऐसा मित्र एक वरदान है, एक नियामत है।

वड़े भाग्यसे मिलता है ऐसा सखा।

वेदका ऋषि इसीलिए प्रभुसे प्रार्थना करता है कि प्रभो, हमें तू निवास दे, मित्र दे।

और सखाके कर्तव्य ?

सखा सख्ये वरेण्यः—सखा अपने सखाको सुख पहुँचाये। सखापर सब कुछ न्यौछावर करे।

विवाहकी मंगल-वेलामें जब महिलाएं गाती हैं—

सतई भांवरि हो कि अव धिय साजनकी! तब अन्तिम सप्तपदीमें पति कहता है—'सखे सप्तपदी भव'—'हे पत्नी, तू मेरा सखा वन।'

और सबसे उत्तम सखा तो है प्रभु। ऋषि कहता है—

सच्चे मित्र हमें दे प्रभु तू, सबसे सच्चा मित्र तुही।
कृपासिक्त तेरा प्रसाद हम, सब मित्रोंको पाना है।।

मित्र-दृष्टिसे देखूं सबको

सख्य तो सीमित हो सकता है, घनिष्ठ मित्रोंकी संख्या तो गिनी-चुनी हो सकती है, पर मैत्रीकी दृष्टि तो इतनी विशाल और व्यापक हो सकती है कि उसमें सारा विश्व समा जाये। वेदने 'मित्र-दृष्टि' हमें देकर अपनी देनोंपर कलश चढ़ा दिया है। घरके आंगनसे लेकर विश्वके विशाल प्रांगण तक,—सीमित नीडसे विश्वनीड तक, छोटेसे कुटुम्बसे 'वसुधैव कुटुम्बकम्' तक वह हमें ले जाती है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

वैदिक ऋषि कहता है कि 'मैं सभी प्राणियोंको मित्र-दृष्टिसे देखूँ और सभी प्राणी मुझे मित्र दृष्टिसे देखें। जिस किसीको मैं देखूँ, वही मेरा मित्र, मेरा प्यारा बन जाय।'

और, 'जिन प्राणियोंको मैं देख नहीं पाता, जो मेरी दृष्टिसे परे हैं, ओझल हैं, वे भी मेरी मित्रदृष्टिकी परिधिके भीतर आ जायं।'

भला इससे बढ़कर व्यापकता और क्या होगी ?

प्रश्न है कि यह मित्र-दृष्टि होती कैसी है ?

एक ताजा उदाहरण लीजिये चण्डीदासका।

भोला ब्राह्मण गया था मछली खरीदने। देखा कि मछुआइनने एक अन्य ग्राहकको अधिक मछली दे दी, उतने ही पैसेमें, चण्डीदास को कम दी। पूछा—'क्यों, री मछुआइन, तूने इतने ही पैसेमें मुझसे ज्यादा मछली उसे क्यों दे दी ?' बोली—'उसकी बात दूसरी है। वह तो मेरा मित्र है—प्रेमी है।' स्तब्ध रह गये चण्डीदास! तार-तार झनझना उठा हृदयका। मित्र है तो चाहे जितना उँडेल दो! और उसीके बाद चण्डीदासपर प्रेमका ऐसा रंग चढ़ा कि सारा मन प्राण उसमें बिंध गया—

एमन पीरिति कभू नाँहि देखि शुनि,
पराणे पराण बाँधा आपनि-आपनि।

फिर तो सहजिया सम्प्रदायके इस प्रसिद्ध साधकने रामीसे क्या प्रेम किया कि राधाकृष्णके दिव्य प्रेमतक जा पहुँचा। उस प्रेम-धारा-में निमज्जन कर कौन आनन्द-विभोर नहीं हो उठता ?

यह मित्र-दृष्टि आते ही मित्रके सारे दोष बिहारीके अनुसार गुण बन उठते हैं—जेतो औगुन ढूंढ़िये, गुनै हाथ परि जाय!

प्रेमीका रोम-रोम पुकारने लगता है—

निगह अपनी हकीकत-आशना मालूम होती है,
नजर जिस शयपै पड़ती है, खुदा मालूम होती है !!

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

शिव-संकल्प करे मन मेरा

कहीं कोई यह शंका न कर बैठे कि ऐसी मित्रदृष्टि तो बहुत ऊँची चीज है। कैसे मिलेगी वह ? मनमें जब तक राग-द्वेष है, तब तक ऐसी पवित्र दृष्टि कैसे आ सकती है ?

ऋषि कहते हैं—'चिन्ता करनेकी बात नहीं। इस मनको ही मोड़ दो। प्रचण्ड शक्तिशाली है यह मन, अत्यन्त वेगवान, परम ज्योतिर्मय। इसे निर्विकार बनाते ही हृदय पवित्र हो उठेगा। मनको शिवसंकल्पकी बूटी पिला दो, फिर तो वह पाप-तापको अपने पास भी न फटकने देगा।'

इसका उपाय है—प्रभुसे प्रार्थना। हमारे सर्वश्रेष्ठ गायत्री मंत्रमें इसीलिए तो कहा है—'धियो यो नः प्रचोदयात्।'

'प्रभो, हमारी बुद्धिको, हमारे मनको तू सन्मार्गपर ले चल।'

केवल सत्तर साल पहले फ्रांसके, नेन्सी स्थानमें एमिली क्यू (१८५७–१९२६) ने एक मानस-चिकित्सालय खोला। स्वास्थ्य, दीर्घायु और रोगमुक्तिके लिए विश्वके असंख्य लोग वहाँ जाते हैं और मनकी अद्भुत शक्तिके जादूको देखकर हैरान रह जाते हैं!

क्यू उन्हें अपनी भाषा फरासीसीमें यह मंत्र देकर कहता था कि सुबह शाम इसे बीस बार जपो, सच्चे मनसे—

Tous Les Jours,
A Tous Points De Vue,
Je Vais De Mieux En Mieux.[1]

अंग्रेजीमें यह मंत्र है—

Day By Day

---

१. एमिली क्यू, सी० हैरी ब्रुक्सः बैटर एण्ड बैटर एवरीडे, १९६०, पृष्ठ २२, २३, १३१

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

In Every Way
I'M Getting Better And Better.

अर्थात्—

सभी तरहसे सब बातोंमें उन्नत होता हूँ प्रतिदिन,
उन्नतसे दिन-दिन उन्नततर होता चलता हूँ प्रतिदिन !

धार्मिक रुचिवाले आस्तिक लोग इस मंत्रमें—

By The Help of God—प्रभु कृपासे—शब्द और जोड़ सकते हैं।[1]

क्या है यह आत्मसुझाव—Auto-Suggestion ?

यह वैदिक ऋषियोंके—मे मनः शिवसंकल्पमस्तु—का ही तो रूपान्तर है। वैदिक ऋषियोंने वैदिक युगमें ही इसका आविष्कार कर लिया था। तभीसे वे मानव को 'अमृत-पुत्र' कहते आये हैं और उसके 'शुद्धं अपापविद्धं' स्वरूपका उसे स्मरण दिलाते आये हैं। मनकी अपार अनन्त शक्तिका वर्णन करते हुए वे कहते हैं —

तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु।[2]

ऋत-सतका पथ

ऋत और सत्य—अनुपम जोड़ी है वेदकी—ऋतं च सत्यम्।
दो पक्ष हैं सत्यके—एक ज्ञानमय, दूसरा कर्ममय।
एक वस्तुगत सत्य, एक वाणीगत सत्य।
नैतिक व्यवस्थाका प्रतिपादक है—ऋत।
कर्मका, व्यवहारका प्रतिपादक है—सत्य।
सारा विश्व ऋतपर आधृत है।
ऋतसे ही सत्य ब्रह्मकी प्राप्ति होती है।
यही है वैदिक ऋषियोंकी अनुभूति।

---

१. एमिलो क्यू : वही, पृष्ठ १३१। २. यजुर्वेद ३४।१-६।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

ऋतको ही सारी सृष्टिकी रचनाका, सारे विश्वकी गतिविधिका एकमात्र कारण माना गया है। वेद अनेक मंत्रोंमें ऋतका वर्णन करता है। जैसे—

—सूर्य ऋतके मार्गका अनुसरण करता है।[१]

—मरुद्‌गण ऋतके ही दूरस्थ स्थानसे निकलते हैं।[२]

—द्युलोक और पृथ्वी ऋतके ही कारण द्युलोक और पृथिवी कहलाते हैं।[३]

—ऋषि प्रार्थना करते हैं कि 'हे इन्द्र, तू हमें ऋतके मार्गका ही निर्देशन कर जो सब बुराइयोंसे शून्य सच्चा मार्ग है'।[४]

ऋतका सच्चा अर्थ समझना कठिन है। कुछ लोग ऋतको सत्यका पर्याय मानते हैं। पर ऐसा है नहीं। दोनोंकी जोड़ी है—

Being And Becoming[५].

डाक्टर राधाकृष्णन् कहते हैं—'ऋत' का शब्दार्थ है—वस्तुओंकी कार्यविधि, सब प्रकारके नियम—ऋत न्यायके सर्वव्यापी भावका भी द्योतक है। विश्वके प्रत्येक पदार्थमें जो व्यवस्था पायी जाती है, वह ऋतके ही कारण है। दृश्यमान जगत् उसी ऋतकी छायामात्र है। ऋत है त्रिकालाबाधित सत्य-रूपी नियम। सब प्रकारकी उथल-पुथल और परिवर्तनकी विक्रियाओंमें अपरिवर्तित रहनेवाली स्थिरताका नाम है—'ऋत'।[६]

वेदका निर्देश है कि प्रत्येक मानवको ऋत और सत्यका ज्ञान प्राप्त कर ऋतधर्मा और सत्यधर्मा बनना चाहिए :

---

१. ऋग्वेद १।२४।८। २. ऋग्वेद ४।२१।३ ३. ऋग्वेद १०।१२१।१। ४. ऋग्वेद १०।१३३।६। ५. प्रो० फतेह सिंह : दि वैदिक एटीमॉलाजो, पृष्ठ ५७। ६. राधाकृष्णन् : भारतीय दर्शन, पृष्ठ ७०-७१

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

ऋतको जानो सत पहचानो, ऋतधर्मा तुम बनो सभी।
परम अहिंसक ऋतधर्मा ही सत्य ब्रह्मको पाते हैं॥

वैदिक जीवनका आदर्श आरम्भसे ही त्याग और तपस्यामय रहा है। ऋतका मार्ग तपस्याकी पगडंडीसे होकर ही प्रशस्त होता है।

बड़ी तपस्या से ही ऋतसत जन्म जगतमें पाते हैं।

वेदने इस मार्गकी ४ मंजिलें बतायी हैं—

व्रत, दीक्षा, दक्षिणा और श्रद्धा।

व्रतेन दीक्षामाप्नोति दीक्षयाप्नोति दक्षिणाम्।
दक्षिणा श्रद्धामाप्नोति श्रद्धया सत्यमाप्यते॥[१]

'पहले सत्यका व्रत लेना पड़ता है। व्रतसे प्राप्त होती है दीक्षा। दीक्षासे दक्षिणा, दक्षिणासे श्रद्धा और श्रद्धासे सत्यकी प्राप्ति होती है।'

वैदिक युगमें भी जब कभी सत्य और असत्यमें होड़ चलती थी। ऐसी द्वंद्वकी वेलामें हम भटक न जायं, इसलिए ऋषि कहता है—'घबड़ा मत। सत्यमेव जयते नानृतम्। विजय सत्यकी होगी, अनृतकी नहीं। जो ऋत नहीं, सो अनृत। सत्यकी नाव ही पार लगायेगी।'

हम सत्यपर दृढ़ रहें, इसके लिए ऋषि अग्निदेवकी प्रार्थना करता है। अग्नि हैं व्रतपति। उनसे वह कहता है—

व्रतपति हो हे अग्निदेव तुम, व्रतकी सिद्धी दो हमको।
सत्य-प्राप्तिके लिए शरणमें, हम सब तेरी आते हैं॥

सदा कर्ममें निरत रहें हम

सत्यकी साधनाके लिए कर्ममय जीवन परम आवश्यक माना गया है। कर्ममय जीवन, श्रममय जीवन जीकर ही सत्यकी उपलब्धि हो

---

१. यजुर्वेद १९।३०

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सकती है। ऋषियोंने अपनी यह अनुभूति अनेक ऋचाओंमें मुखरित की है। यह तक कह दिया कि जो पुरुषार्थी है, प्रार्थना भी उसीकी सुनी जाती है—

यश्चकार जजार सः।[1]

वैभव चाहिए तो जागो, दारिद्र्य चाहिए तो सोओ।

भूत्यै जागरणं अभूत्यै स्वपनम्।[2]

वैदिक आदर्श यही था कि हम सतत कर्मशील रहें, स्वस्थ रहें, प्रसन्न रहें—

सदा कर्ममें निरत रहें हम, श्रमसे पैदा कर खावें।
शत वसन्तसे सदा उल्लसित मधुमय जीवन हम पावें॥

मधुमय जीवन रहे हमारा

वैदिक ऋषि मधुमय जीवनके पक्षपाती थे। मधुसे उन्हें बड़ा प्रेम था। दो अक्षरोंका शब्द 'मधु' उन्हें परम प्रिय था।

मधु माने मीठा, मधुर, प्रिय, आनन्ददायक।

नाना पुष्पोंका पराग लेकर मधुमक्षिकाएँ जिस अमृतका संचय करती हैं, उसका नाम है—मधु।

चित्तको प्रिय लगनेवाली प्रत्येक वस्तु 'मधु' की परिभाषामें आती है, फिर वह चाहे दाख हो चाहे खजूर, मुलहठी हो या मिश्री, दूध हो या दही।

मधुत्रय है—शहद, घृत और शर्करा।

मधुपर्क है—मधु, दधि, शर्करा और जल।

पंचामृत है—मधु, दधि, दुग्ध, घृत और शर्करा।

मधुके साथ माधुर्य तो है ही, पावित्र्य भी जुड़ा है। इसीलिए तो प्रभुका एक नाम—मधुराधिपति—भी है। मधुके साथ उन्हें जोड़ते ही उनसे लगी सभी वस्तुएँ मधुर हो उठती हैं।

---

१. अथर्ववेद १०।८।२६ २. यजुर्वेद ३०।१७

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

प्रियके साथ जुड़ते ही प्रत्येक वस्तु, प्रत्येक व्यक्ति, प्रेममय मधुमय बन जाता है—

मधुराधिपतेरखिलं मधुरम् ॥

बहन भाईके घर आती है मंगल अवसरपर। लोकगीत है—

धनिया आवत है वहिनो हमार, गरब जिनि बोलेउ़
निहुरि पैयाँ लागेउ हो।....
देविउं मैं तीनिउ नेग औ सोरहो सिंगारउ।
हमरे हरीजीकी परम पियारि, तुहार मन राखब हो।

सभी पदार्थोंमें वैदिक ऋषियोंने प्रभुके माधुर्यकी अनुभूति की और इसीलिए उन्होंने सारा जीवन मधुमय बनानेपर जोर दिया।

ऋषि चाहते थे कि हमारे जीवनमें यत्र-तत्र-सर्वत्र मधुकी ही वर्षा होती रहे—

मधुवाता ऋतायते मधुक्षरन्ति सिन्धवः, माध्वीर्नः सन्त्वोषधीः।[१]

खानपानमें, अन्नमें, जलमें, वायुमें, औषधिमें मधु, आचार-व्यवहार-में मधु, आवागमनमें मधु। यत्र-तत्र-सर्वत्र मधु ही मधु !!

ऋषि वार-वार इसी तथ्यपर बल देते हैं—

मधुमय जीवन रहे हमारा, सुख शान्तीसे सदा भरा।

वाणीमें मधु घोल

जीवनके जब सभी व्यापार मधुमय हों, तो वाचा क्यों न मधुमय हो ?

वैदिक ऋषि वाणीके महत्त्वको समझते थे, खूब समझते थे। वे जानते थे कि वाणी अमृत भी बरसा सकती है, विष भी। उसका सदु-

१. ऋग्वेद १।९०।६

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

पयोग ही वांछनीय है, दुरुपयोग नहीं। इसीलिए उन्होंने कड़ा निषेध किया—

उग्रं वचो अपावधीत।[1]

'खबरदार, जो कभी कड़वी बात मुँहसे निकाली।'

वेद कहता है कि ज्ञानी पुरुष भलीभाँति छान-बीनकर ही सत्य बोलते हैं, पवित्र बोलते हैं—

सक्तुमिव तितउना पुनन्तो........।[2]

ऐसी पवित्र वाणीसे मैत्री भाव बढ़ता है और सुख-समृद्धि आती है।

वेदमें अनेक मंत्र हैं—सत्यपूरित मोठी वाणी बोलनेके सम्बन्धमें। वह कहता है—

सत्य बोलो, प्रिय बोलो, मीठा बोलो। ऊपरसे नहीं, भीतरसे भी। अहिंसामय, प्रेममय जीवन बितानेके लिए अनिवार्य है—मधुमय वाचा।

वेद बार-बार इस तथ्यपर बल देता है—

वाणीमें मधु घोल, मनुआँ मीठा-मीठा बोल।
कड़वी बात कभी मत कह तू, कड़वा शब्द न बोल।[3] मनुआँ०

पति पत्नी हों एक प्राण-तन

वैदिक ऋषियोंने समाजका नियमन करनेके लिए वर्ण और आश्रमकी व्यवस्था की। ब्रह्मचर्य आश्रमकी परिसमाप्तिपर स्नातक अपना विद्याध्ययन पूरा कर घर-परिवारमें, समाजमें लौटता है और विवाहके पवित्र बन्धनमें बँधकर गृहस्थधर्ममें प्रवेश करता है।

---

१. यजुर्वेद ५।८२. ऋग्वेद १०।७१।२। २. देखिये, श्रीकृष्णदत्त भट्ट : मीठा मीठा बोल, १९८२। ३. ऋग्वेद १०।८५।३६, ५।३।२, ५।२८।३, ३।५३।४।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

विवाहका उद्देश्य हैं—गृहस्थ बनकर देवोंके लिए यज्ञ करना तथा सन्तानोत्पत्ति करना। कन्याएँ अपेक्षाकृत बड़ी आयु प्राप्त होनेपर अपना जीवन-संगी ढूंढ़ लेती थीं।[1] ऋग्वेद (१०।८५) में और अथर्ववेद (१४।१, १४।२) में अनेक मंत्रोंमें विवाह सम्बन्धी कृत्यों-का वर्णन है।

विवाहके मंत्रोंमें देवोंसे यही प्रार्थना की गयी है कि पति और पत्नी मिलकर एकाकार हो जायं, दोनों मिलकर गृहस्थ-धर्मकी नौका प्रेमपूर्वक खेयें—

पति पत्नी हों एक प्राण-तन, दूधमें जैसे पानी।

गार्हस्थ्य जीवनका मूलमंत्र है—

स्वयं सुखी रह सबको सुख दे, सबकी आशिष पानी।
सुख-आनन्द-शान्तिकी घरमें, हमें त्रिवेणी लानी॥

पति पत्नी जब एकप्राण-तन होकर रहते हैं, तो गृहस्थ जीवन आनन्द-निकेतन बन उठता है। पारस्परिक प्रेम इस जीवनका मूल आधार है।

रानी बहू, स्वर्ग कर घरको

विवाहके उद्देश्यकी पूर्तिके लिए 'रानी बहू' को विशेष रूपसे उसके पवित्र कर्तव्यका स्मरण दिलाया जाता है। घरको आनन्द-कानन बनाना बहुत कुछ उसीपर निर्भर करता है। वह अपनी सेवासे, स्नेह-से, प्रेमसे घरको स्वर्ग बना सकती है। इसीलिए उसके अनेक मंत्रों द्वारा उसे उसके कर्तव्यका बोध कराया जाता है—

रानी बहू स्वर्ग कर घरको, प्रेम प्यारसे भर दे।
पति-गृहकी साम्राज्ञी बनकर, घर मंगलमय कर दे॥

---

१. ऋग्वेद १०।२७।१२, १०।८५।२६-२७, ४६

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सेवा द्वारा सास-ससुरका जीवन सुखमय कर दे।
पतिकी प्यारी बनकर रह तू, घरमें वैभव भर दे॥
देवर-ननदोंको अपना कर, स्नेह प्यारसे भर दे।
छोटे बड़े सभी परिजनपर प्रेमकी वर्षा कर दे॥

हो परिवार प्रेमसे पूरित

जहाँ पति-पत्नी एक-प्राण हैं, रानी बहू अपने आचार-व्यवहारसे, सेवा, त्याग, स्नेह और प्रेमसे सारे घरको अपनी मुट्ठीमें किये है, वहाँ परिवारके सुख और आनन्दका पार नहीं रहता। वैदिक ऋषियों-ने ऐसे ही आनन्दमय परिवारकी कल्वना की थी—

हो परिवार प्रेमसे पूरित, सदा रहे आनन्द भरा।
सौमनस्यके ही दर्शन हम रात दिवस उसमें पावें॥
हालके जाये बछड़ेको ज्यों गैया करती प्यार।
वैसा उत्कट प्रेम सभीको घरमें हम करते पावें॥
माता पिता बहन औ भाई, बेटे बेटी बहू स्वजन।
एक दूसरेपर न्यौछावर होते हम सबको पावें॥
पुत्र एक मन हो मातासे, चले सदा पितुके अनुकूल।
भाई बहनोंको आपसमें प्रेम लुटाते हम पावें॥
मीठी वोली ही सब बोलें, पति पत्नी भाई बहनें।
मतभेदोंकी कहीं न कोई छाया हम पड़ते पावें॥

कैसी भव्य कल्पना है ऋषियोंकी।

गृहस्थके दो विशेष कर्तव्य माने हैं वेदने—

१—अतिथिका सत्कार, और

२—गो-सेवा।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

होता रहे अतिथिका स्वागत, करें हमारा वे कल्याण।
गोठोंमें हम गोमाताको मंगलध्वनि करते पावें ।।

कैसा आनन्दमय होगा ऐसा पारिवारिक जीवन, जहाँ परिवारके सभी प्राणी, गाय गोरू तक सुखमय जीवन बिताते हों—

माता पिता गाय गोरू नर सुखसे सब भरपूर रहें।
सबका हो कल्याण जगतमें, सब प्राणी स्वस्ती पावें ।।

धरती माता, सुत हम तेरे

ऋतधर्मा, सत्यधर्मा, कर्मपरायण ऋषियोंने जिस प्रकारके स्वस्थ और सबल सामाजिक जीवनकी कल्पनापर बल दिया, उसी प्रकार उन्होंने आर्थिक जीवनके नियमनपर भी ध्यान दिया।

धरतीकी पुत्रवत् सेवा करनेके लिए ऋषि तत्पर है, कहता है—

माता भूमिः पुत्रो अहं पृथिव्याः।[1]

हम पुत्रवत् धरती मांकी सेवा करेंगे, तो वह निश्चय ही हमें धनधान्यसे भर देगी—

गोदीमें जिसकी हम पलते औ अन्न धान्य हैं हम पाते।
आ-समुद्र फैली धरती माँ, हमपर विभूतियाँ बरसावें ।।

ऋषियोंने कृषि-कर्मको परम पवित्र माना। कुछ लोग धन पाकर द्यूत आदिके दुर्व्यसनोंमें पड़ जाते हैं। उनकी तीव्र भर्त्सना करते हुए ऋषियोंने कृषि-कर्म करनेपर बल दिया है।[2] कृषकोंकी सुख-समृद्धि-

---

१. अथर्ववेद १२।१।१२
२. ऋग्वेद १०।३४।१३

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

पर ही सारे समाजकी समृद्धि निर्भर करती है, इसकी सफलताके लिए ऋषि कहते हैं—

कृषक सुखी हों, बैल सुखी हों, बीज, भूमि औजार सुखी।
कृषि करनेके जितने साधन, वे सब सुखमय बन जावें॥

मंगलदातृ ओ गो-माता !

बैल है कृषिकी रीढ़। बैलकी जननी है गोमाता। ऋषि गोमाताकी वंदना करते नहीं अघाते—

मंगलदातृ ओ गोमाता, जगमें तू अनन्द भर दे।
तेरे वरदानोंसे भूषित सब प्राणी आनन्द पावें॥

पोषण करती है सब जगका दूध दही से यह धेनू।
निर्भर होकर उसे विचरते सारे जगमें हम पावें॥

पुण्य कमाई सदा करें हम

ऋषियोंने धनोपार्जनके लिए इस तथ्यपर सबसे अधिक बल दिया कि हमारी कमाई पवित्र हो, पुण्यमयी हो, उसमें किसीका शोषण न हो, किसीपर अन्याय और अत्याचार न हो। कारण, ऋषि जानते थे कि पापकी कमाई टिकती नहीं। अतः वे कहते थे—

पुण्य कमाई सदा करें हम, जिससे सुख शान्ती पावें।
श्रमसे तपसे जगकी रचना, श्रम करना कर्तव्य परम।
सत्य अहिंसा पथपर चलकर ही हम सुख सम्पत्ति पावें॥

इतना ही नहीं, वे यह भी कहते हैं—

धन है प्रभुका, नहीं हमारा, कभी न हम इसको भूलें।
इसे दानमें रहें लुटाते, दुःखियोंको देकर खावें॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

त्यक्तेन भुंजीथाः

ऋषियोंने आर्थिक पावित्र्यके लिए इन तथ्योंपर बल दिया—

१—हम सदा कर्म-निरत रहें। आलसी बनकर पड़े न रहें। श्रम-साधना हमारा लक्ष्य रहे।

२—हम भूमाताकी सेवा करें। व्यसनोंसे दूर रहें।

३—हम पुण्यमार्गसे, ऋत-मार्गसे, सत्य-मार्गसे धन-सम्पत्तिका उपार्जन करें।

४—'सम्पत्ति हमारी नहीं, प्रभुकी है'—ऐसा मानते हुए हम उसे समाजकी सेवामें, प्रभुकी सेवामें सतत लगाते रहें। दूसरोंको खिलाकर ही खायें।

ऋषि कहते हैं—

अर्पित कर दे तू समाजको जो कुछ प्रभुसे पाया है।
जो खाता है बिना खिलाये, नहीं प्रभुको पाता है॥

संग चलें हम, संग रहें हम

प्रेममय, अहिंसा-मय, मैत्री-मय ऋतमय, सत्य-मय, और मधुमय हो हमारा वैयक्तिक जीवन।

सेवामय, त्यागमय और स्नेहमय हो हमारा पारिवारिक जीवन।
श्रममय, कर्तव्यमय और पुण्यमय हो हमारा आर्थिक जीवन।

इस प्रकारके शुद्ध और पवित्र जीवनकी जो कल्पना वैदिक ऋषियोंने की, उसकी पूर्णता सामाजिक जीवनमें होनी ही थी। वे कहते हैं कि हम सारे सामाजिक प्राणी मिलकर रहें, मिलकर ही सारे काम करें।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

संग चलें हम, संग रहें हम, संग करें सब काम।
एक चित्त हो, एक हृदय हो, कर डालें सब काम॥
निश्चय औ संकल्प एक हो, मन हो सबका एक।
मीठा हो व्यवहार सभीका, मीठे सारे काम॥

जीवनका परम मांगल्य इसीमें है। वेदके ऋषि इस तथ्यपर बार-बार बल देते हैं। वे इसी नवनीत द्वारा ऋग्वेदकी परिसमाप्ति करते हैं—

सौमनस्य और सामंजसका व्रत लेकर हम चलें सदा।
अपनों और परायों—सबके बन जावें कल्याण-काम॥

सेवा सारे प्राणी-समाज की

जब सौमनस्य और सामंजस्य हमारे सामाजिक जीवनका मूलमंत्र होगा, तब उसका अनिवार्य परिणाम होगा—मानव मात्रकी सेवा। और केवल मानव ही क्यों, प्राणिमात्रकी सेवा।

हम जिस ग्राम या नगरमें रहते हैं, उसकी सेवा।
जिस देशमें, जिस जगतमें हम निवास करते हैं, उसकी सेवा।
दुखियोंकी सेवा। बीमारोंकी सेवा।

प्राणिमात्रकी सेवा। सबकी कल्याण-कामना। ऐसी भावना जब प्रस्फुटित होती है, तो मानवका रोम-रोम पुकारता है :

मनुज मात्रकी सेवा कर हम जगतीका कल्याण करें।
मानव समाजके दुःखोंका हम यथाशक्ति अवसान करें॥
जितने भी कर्म हमारे हों, वे भरे अहिंसासे होवें।
कल्याण विश्वका हो उनसे, जिससे प्रभु हम पर कृपा करें॥

द्वेषमुक्त कर दो प्रभु हमको

सेवाके लिए पहली शर्त है—द्वेषमुक्ति।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

किसीके प्रति द्वेष रखकर, बैर भाव रखकर, घृणा और उपेक्षा रखकर हम सेवा नहीं कर सकते। सेवकका हृदय तो प्रेम, प्यार, मुहब्बतसे इतना ओतप्रोत रहता है कि वह वैर, द्वेष, घृणा, उपेक्षाकी कल्पना भी नहीं कर सकता। उसका तो रोम-रोम यही पुकारता है—

करू मैं दुश्मनी किससे, अगर दुश्मन भी हो अपना।
मुहब्बतने नहीं छोड़ी जगह दिलमें अदावतकी॥

वेदकी अनेकानेक ऋचाएँ हमें द्वेष-मुक्तिके साधन बताती हैं। कुछ उदाहरण लीजिये :

हिंसा नहीं करें हम जगमें, नहीं अशान्ती फैलावें।[1]

यदि हमसे कभी ऐसा अपराध बन हो जाये, तो वह हमारे लिए इतना अशोभनीय हो, ग्लानि पूर्ण हो कि हम उसके चलते जीवित रहनातक पसन्द न करें—

कभी जलावें यदो किसीको या हम पीड़ा पहुँचावें।
ऐसा जीवन जीनेसे तो अच्छा है हम मर जावें॥[2]

प्रायः ऐसा होता है कि कुछ लोगोंके कृत्योंको लेकर अथवा उनके द्वारा अपने स्वार्थोंमें बाधाएँ आते देख हम उन्हें 'दुष्ट' मान बैठते हैं और सोचने लगते हैं कि ऐसे व्यक्तियोंका नाश हो, उनका बुरा हो, उनका अकल्याण हो। यह अनिष्ट-चिन्तन हमारे मनको दूषित करता है। इसके परिहारका उपाय यही है कि हम ऐसे लोगोंसे भी प्रेम करें। उनके कृत्योंपर न तो क्षुब्ध हों और न उनसे किसी प्रकार का प्रतिशोध लेनेकी कल्पना करें—

---

१. ऋग्वेद १०।१३४।७
२. अथर्व० ८।४।१५

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

नहीं बुरा हम सोचें उनका, दुष्ट और जो द्वेषी हैं।
नहीं मारना है उनको भी, हमें मारने जो आवें ॥[1]

हमें तो उन लोगोंको भी नहीं मारना है, जो हमपर प्रहार करनेको उद्यत हों, जो हमारा अपमान करते हों, जो हमें सताते हों—

अपमानित करते जो हमको, नासमझीमें पड़े हुए।
उनसे बदला लेनेको हम, कभी न उत्सुक हो जावें ॥[2]

वैर और द्वेषकी भावनाओंसे हमारा हृदय मुक्त रहे, हमारे चारों ओर निर्वैरताका ही वातावरण रहे—उसके लिए बारबार प्रभुसे प्रार्थना की जाती है—

वातावरण बना दो ऐसा, इन्द्र देव, तुम कृपा करो।
जिधर दृष्टि हम डालें सबको निर्वैरी ही हम पावें ॥[3]

वैर-द्वेषमय कुई कर्म प्रभु, कभी न हमसे होने दें।
पूर्ण अहिंसामय जीवन हो, निर्विकार हम बन जावें ।[4]

शत्रु हमारे मित्र बनें सब

जब ऐसी उत्तम स्थिति होगी, तो विश्वमें कहीं भी कोई हमारा शत्रु नहीं रह जायेगा और जब कहीं कोई शत्रु ही नहीं तो हमें किसीका डर भी क्यों होगा? सबको सबसे बड़ा दान—अभयदान—देकर हम सर्वत्र निर्भय होकर विचरण करेंगे। इसके लिए हम प्रभुसे प्रार्थना करते हैं—

निर्भय कर दे हमें प्रभू तू, जहाँ कहीं भी हम जावें।
शत्रु हमारे मित्र बनें, हम सबसे निर्भय हो जावें ॥[5]

---

१. ऋग्वेद ७।९४।८। २. ऋग्वेद १।५०।१३, १।२५।२। ३. अथर्व० ६।४०।३। ४. ऋग्वेद ९।१३।८। ५. यजुर्वेद ३६।२२, ऋग्वेद १।५।१०।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

इतना ही नहीं, हम तो यह भी चाहेंगे कि शत्रु भी हमारी प्रशंसा करने लगें—अहिंसा, प्रेम और मैत्रीका अन्तिम परिपाक यही है—

मानव-जाया कभी न कोई हमसे राखे द्वेष कभी।
शत्रु हमारी करें प्रशंसा, मित्र हमारे बन जावें॥[1]

शत्रुको मित्र बनानेकी कैसी कीमिया वेद-मंत्रोंमें भरी पड़ी है!

ॐ शांतिः शांतिः शांतिः

जहाँ अहिंसा है, प्रेम है, मैत्री है, वहाँ निर्भयता है, सुख है, शान्ति है, आनन्द है, कल्याण है। हमारा ही नहीं, सारे जगतका, सारे विश्व-का, प्राणिमात्रका। इसी दृष्टिसे वेद-पाठके आदि और अन्तमें सदैव शान्तिपाठ किया जाता है। आइये, हम भी शान्तिपाठ करें—

सबका हो कल्याण जगतमें, सब प्राणी शान्ती पावें।
भयका रहे न नाम कहीं भी, हम सब निर्भय बन जावें॥
शान्ता हो द्यौ, शान्ता पृथिवी, अन्तरिक्ष भी शान्त रहे।
शांति शांति हो शांति चतुर्दिक, जगमें सब शान्ती पावें।

ॐ शान्तिः! शान्तिः!! शान्तिः!!!

—श्रीकृष्णदत्त भट्ट

जन साहित्य मन्दिर,
बोलियाबाग, नाटीइमली
वाराणसी—२२१००२
निर्जला एकादशी, २०४१

---

१. ऋग्वेद १।४।६

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

ॐ

१. ओ३म् खं ब्रह्म । यजुर्वेद ४०।१७
२. ऋचो अक्षरे परमे व्योमन । ऋग्वेद १।१६४।३९
३. अग्निमीळे । ऋ० १।१।१
४. ऋतं च सत्यं चाभीद्धात्तपसोऽध्यजायत। ऋ० १०।१९०।१
५. पिपर्तु नो अदिती राजपुत्रा अति द्वेषांसि । ऋ० २।२७।७

ॐ ॐ ॐ

ॐ एक ही परमाक्षर है, सबसे बढ़कर मंत्र यही ।
ऋचो अक्षरे परमे व्योमन, यही ऋषी बतलाते हैं ।।
'अ' उसका ही प्रथम वर्ण है, 'उ' है मध्यम कहलाता ।
'म' उनमें जुड़ते ही तीनों—ॐ रूप बन जाते हैं ।।
पश्यंती, मध्यमा, वैखरी—इन तीनों की जो जननी ।
उसी परा में ओ३म् प्रतिष्ठित, तीनों रूप कहाते हैं ।।
तीन नेत्र हैं ये त्र्यम्बक के, तीन पाद हैं विष्णू के ।
इळा भारती औ सरस्वती—इसी ॐ में पाते हैं ।।
ब्रह्म रूप भी यही ॐ है, सर्वव्यापी ज्यों आकाश ।
इसी ॐ को अग्नि रूप में स्वयं-प्रकाशित पाते हैं ।।
अघमर्षण मंत्रों द्वारा हम नित्य नमन उसको करते ।
बड़ी तपस्या से ही ऋत-सत जन्म जगत में पाते हैं ।।
ऋत-सत के ही अटल नियम से सृष्टी की होती रचना ।
पृथ्वी सागर अन्तरिक्ष, अपना स्वरूप सब पाते हैं ।।
अहो रात्रि संवत्सर अथवा सूर्य चन्द्र या तारागण ।
इतनी सृष्टि विशाल सामने, हम निज को अणु पाते हैं ।।
ऋत-सत रूप पिता माता ओंकार ब्रह्म से यही विनय ।
द्वेष-मुक्ति दे हमें प्रभू तू, जिससे सब सुख पाते हैं ।।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

पश्य देवस्य काव्यम्

६. उपह्वरे गिरीणां संगमे च नदीनाम् ।
धिया विप्रो अजायत ॥ ऋ० ८।६।२८

७. देवस्य पश्य काव्यम् ।
न ममार न जीर्यति ॥ अथर्व० १०।८।३२

८. वृषारवाय वदते यदुपावति चिच्चिकः ।
अघाटिभिरिव धावयन्नरण्यानिर्महीयते ॥ ऋ० १०।१४६।२

९. उत गावइवादन्त्युत वेश्मेव दृश्यते ।
उतो अरण्यानिः सायंशकटीरिव सर्जति ॥ ऋ० १०।१४६।३

१०. आंजनगन्धि सुरभि बह्वन्नामकृषीवलाम् ।
प्राहं मृगाणां मातरमरण्यानिमशंसिषम् ॥ ऋ० १०।१४६।६

११. आ घा योषेव सूनर्युषा याति प्रभुंजती ।
जरयन्ती वृजनं पद्वदीयत उत्पातयति पक्षिणः ॥ ऋ० १।४८।५

१२. विश्वस्य हि प्राणनं जीवनं त्वे वि यदुच्छसि सूनरि ।
सा नो रथेन बृहता विभावरि श्रुधि चित्रामघे हवम् ॥
ऋ० १।४८।१०

१३. रुशद्वत्सा रुशती श्वेत्यागादारैगु कृष्णा सदनान्यस्याः ।
समानबन्धू अमृते अनूची द्यावा वर्णं चरत आमिनाने ॥
ऋ० १।११३।२

१४. विश्वमस्या नानाम चक्षसे जगज्ज्योतिष्कृणोति सूनरी ।
अप द्वेषो मघोनी दुहिता दिव उषा उच्छदप स्रिधः ॥
ऋ० १।४८।८

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कैसा सुन्दर काव्य प्रभूका, मोद और आनन्द भरा

सरिता-तटसंलग्न गुफाएँ, जो अरण्य के बीच बनीं।
वहीं विप्र जन्मे धी धृति से, वेद रिचाएँ यों गावें॥

कैसा सुन्दर काव्य प्रभू का, मोद और आनन्द भरा।
जिधर दृष्टि हम डालें उस पर, अजर अमर ही हम पावें॥

हरे भरे सुन्दर अरण्य की, शोभा का है पार नहीं।
गौओं बैलों हिरनों को हम, यत्र तत्र चरते पावें॥

वृषभों की ही भाँति कर रहा, कोई रव, कोई चीं चीं।
वीणा के स्वर में मानों ये, वन देवी का यश गावें॥

लता गुल्म के भवन सजे हैं, ठौर ठौर वन में देखो।
शकटों की-सी चरर मरर ध्वनि, संध्या में हम सुन पावें॥

हरिणनाभि-सा सौरभ फैला, वन देवी का चारों ओर।
हरिणों की इस मातृ-रूपिणी, देवी पर हम बलि जावें॥

परम प्रेरिका प्राणदायिनी, ऊषा हो, संध्या हो, रात्रि।
सबकी अद्भुत सुषमा पर, न्यौछावर अपने को पावें॥

द्यौ की बेटी परम सुन्दरी, ऊषा रानी विभावरी।
धरती पर जीवन, प्रकाश, फैलाते हम उसको पावें॥

सबमें भरती प्राण-प्रेरणा, उत्साहित सबको करती।
नित नूतन ऊषा की झांकी, पा हम गद्गद् हो जावें॥

श्वेत वस्त्र-धारिणि ऊषा, औ कृष्ण वस्त्र पहने रजनी।
एक दूसरी को उछालते, बाल सूर्य को हम पावें॥

ऊषा देवी को प्रणाम कर, यही मांगते हम वरदान।
घृणा द्वेष करनेवालों से, मुक्ति मिले, सब सुख पावें॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कस्मै देवाय हविषा विधेम ?

१५. त्वमिमा ओषधीः सोम विश्वास्त्वमपो अजनयस्त्वं गाः ।
त्वमा ततन्थोर्वऽन्तरिक्षं त्वं ज्योतिषा वि तमो ववर्थ ॥
ऋ० १।९१।२२

१६. गायन्ति त्वा गायत्रिणोऽर्चन्त्यर्कमर्किणः ।
ब्रह्माणस्त्वा शतक्रत उद्वंशमिव येमिरे ॥
ऋ० १।१०।१

१७. हिरण्यगर्भः समवर्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत् ।
स दाधार पृथिवीं द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥
ऋ० १०।१२१।१

१८. य आत्मदा बलदा यस्य विश्व उपासते प्रशिषं यस्य देवाः ।
यस्यच्छायामृतं यस्य मृत्युः कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥
ऋ० १०।१२१।२

१९. यः प्राणतो निमिषतो महित्वैक इद्राजा जगतो बभूव ।
य ईशे अस्य द्विपदश्चतुष्पदः कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥
ऋ० १०।१२१।३

२०. उदु त्यं जातवेदसम् देवं वहन्ति केतवः ।
दृशे विश्वाय सूर्यम् ॥ ऋ० १।५०।१

२१. चित्रं देवानामुदगादनीकं चक्षुर्मित्रस्य वरुणस्याग्नेः ।
आ प्रा द्यावापृथिवी अन्तरिक्षं सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुषश्च ॥
ऋ० १।११५।१

२२ यस्य सूर्यश्चक्षुश्चन्द्रमाश्च पुनर्णवः ।
अग्निं यश्चक्र आस्यं तस्मै ज्येष्ठाय ब्रह्मणे नमः ॥
अथर्व० १०।७।३३

२३. यत्रानन्दाश्च मोदाश्च मुदः प्रमुद आसते ।
कामस्ययत्राप्ताः कामास्तत्र माममृतं कृधि ॥ ऋ० ९।११३।११

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अर्चनीय है कौन देवता, तुझे छोड़कर परम प्रभो ?

जल है, थल है, और सृष्टि है, औषधियों से पूर्ण मही।
इस सुन्दर रचना का सृष्टा, तुझे छोड़कर कौन प्रभो ?
गायत्री के भक्त और, जो वेदपाठ के अभ्यासी।
वेदों के मंत्रों से तेरा, करते अर्चन सदा प्रभो॥
जब संसार नहीं था उपजा, कौन कहाँ तब रहा प्रभो ?
यह हिरण्यमय जगती किसके, उदर गर्भ में रही प्रभो ?
पंचभूत के इस समूह का, स्वामी रक्षक कौन प्रभो ?
व्योम भूमि का धारणकर्ता, तुझे छोड़कर कौन प्रभो ?
विश्वदेव हैं किसे पूजते, जीवनदाता कौन प्रभो ?
किसकी अज्ञा में सब चलते, सबका त्राता कौन प्रभो ?
किसकी कृपा चाहते हैं सब, बलदाता है कौन प्रभो ?
सारे जगको जीवन अमृत, देनेवाला कौन प्रभो ?
प्राणवान सारे जीवों का, शासनकर्ता कौन प्रभो ?
नर नारी औ पशुपक्षी का, सबका स्वामी कौन प्रभो ?
जग के स्वामी तुझे छोड़कर, अर्चनीय है कौन प्रभो ?
मुक्ति-साधना हित तन हमको, देनेवाला कौन प्रभो ?
गिरि सागर आदिक जितने हैं, सृष्टिरूप अद्भुत अनुपम।
केतु रूप में हैं फहराते, वे सब तेरी कीर्ति प्रभो॥
मित्र वरुण हों, अग्नि देव हों, सब पर तेरी कृपा प्रभो।
तेरी ही आत्मा बसती है, थावर जंगम बीच प्रभो॥
द्यावा पृथिवी अन्तरिक्ष खग, सबका तू आधार प्रभो।
तेरी ही झाँकी हम पाते, सब चित्रों के बीच प्रभो॥
सूर्य चन्द्र हैं चक्षु और, यह अग्निदेव है मुख तेरा।
श्रद्धा से नत मस्तक हो, करते प्रणाम हम तुझे प्रभो॥
मोद और आनन्द ज्योति से, पूर्ण लोक रहता है जो।
उसी कामना-शून्य क्षेत्र में, हमको ले चल परम प्रभो॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सहस्रशीर्षा पुरुषः

२४. स पर्यगाच्छुक्रमकायमव्रणमस्नाविरं शुद्धमपापविद्धम् ।
कविर्मनीषी परिभूः स्वयंभूर्याथातथ्यतोऽर्थान्
व्यदधाच्छाश्वतीभ्यः समाभ्यः ॥
यजु० ४०।८

२५. अकामो धीरो अमृतः स्वयंभू रसेन तृप्तो न कुतश्चनोनः ।
तमेव विद्वान् न विभाय मृत्योरात्मानं धीरमजरं युवानम् ॥
अथ० १०।८।४४

२६. सहस्रशीर्षा पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात् ।
स भूमिं विश्वतो वृत्वात्यतिष्ठद्दशांगुलम् ॥ ऋ० १०।९०।१

२७. विश्वतश्चक्षुरुत विश्वतोमुखो विश्वतोबाहुरुत विश्वतस्पात् ।
सं बाहुभ्यां धमति सं पतत्रैर्द्यावाभूमी जनयन्देवऽएकः ॥
ऋ० १०।८१।३

२८. त्वमिन्द्राभिभूरसि त्वं सूर्यमरोचयः ।
विश्वकर्मा विश्वदेवो महां असि ॥ साम० उ०, १०२६

२९. इन्द्रं मित्रं वरुणमग्निमाहुरथो
दिव्यः स सुपर्णो गरुत्मान् ।
एकं सद् विप्रा बहुधा वदन्ति
अग्निं यमं मातरिश्वानमाहुः ॥ ऋ० १।१६४।४६

३०. तदेवाग्निस्तदादित्यस्तद्वायुस्तदु चन्द्रमाः ।
तदेव शुक्रं तद् ब्रह्म ताऽआपः स प्रजापतिः ॥ यजु० ३२।१

३१. रूपं रूपं प्रतिरूपो बभूव तदस्य रूपं प्रतिचक्षणाय ।
ऋ० ६।४७।१८

३२. सुपर्णं विप्राः कवयो वचोभिरेकं सन्तं बहुधा कल्पयन्ति ।
ऋ० १०।११४।५

३३. विश्वा हि वो नमस्यानि वन्द्या नामानि ।
देवा उत यज्ञियानि वः ॥ ऋ० १०।६३।२

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सब नामों में सब रूपों में, बसता है प्रभु एक तुही !

तू अकाय अव्रण अस्नाविर, परम शुद्ध है ब्रह्म तुही।
कवि त्रिकालदर्शी सुमनीषी, सबका कर्ता एक तुही।।
तू अकाम निष्काम धीर है, ज्योति रूप है विश्वंभर।
अजर अमर आनन्दपूर्ण है, देव दयामय एक तुही।।
तू परिभू है, तुही स्वयंभू, तू प्रकाश देता रवि को।
रस से रहता सदा तृप्त तू, देवों का भी देव तुही।।
आँखें तेरी हैं अनन्त, मुख औ पैरों का पार नहीं।
शत-सहस्रशीर्षा हो अच्युत, ब्रह्माण्डों में भरा तुही।।
सब में रहता ओतप्रोत तू, फिर भी है सिर पर सबके।
दश अंगुल सबसे ऊपर ही, रहता है प्रभु एक तुही।।
सारे जग को है तू लखता, नहीं छिपा तुझसे कुछ भी।
सब के घट में तू बसता है, सबमें व्यापक एक तुही।।
तू अनन्त बाहोंवाला है, भरा पराक्रम औ बल से।
द्यावा पृथ्वी का प्रकाश तू, भरता सब में ज्योति तुही।।
इन्द्र अग्नि सविता है तूही, मित्र विष्णु औ वरुण तुही।
पूषन मघवन जगन्नियन्ता, रुद्र और शिव एक तुही।।
तुही बृहस्पति वाचस्पति है, मघवा मंगलधाम तुही।
माता अदिति भूमि द्यावा के,- सब रूपों में एक तुही।।
सभी रूप तेरे सुन्दर हैं, अद्वितीय है एक तुही।
सब नामों में, सब रूपों में, बसता है प्रभु एक तुही।।
तुही सच्चिदानन्द प्रभू है, बहुरुपिया है प्रभू तुही।
ज़िधर दृष्टि जाती हम पाते, सब पर छाया प्रभू तुही।।
कहें मातरिश्वा हम तुझको, गरुत्मान या सोम कहें।
कह सुपर्ण हम तुझे पुकारें, उत्तरदाता प्रभू तुही।।
नाम रूप तेरे अनन्त हैं, करते हम वंदन तेरा।
कवि ज्ञानी कहते सम स्वर से, सबमें रमता राम तुही।।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

त्वमस्माकं तव स्मसि

३४. त्वमस्माकं तव स्मसि। ऋ० ८।९२।३२

३५. स नो बन्धुर्जनिता स विधाता धामानि वेद भुवनानि विश्वा।
यजु० ३२।१०

३६. स नः पितेव सूनवेऽग्ने सूपायनो भव।
सचस्वा नः स्वस्तये॥ ऋ० १।१।९

३७. त्वामग्ने पितरामिष्टिभिर्नरस्त्वा भ्रात्राय शम्या तनूरुचम्।
त्वं पुत्रो भवसि यस्तेऽविधत्त्वं सखा सुशेवः पास्याधृषः॥
ऋ० २।१।९

३८. अग्निं मन्ये पितरमग्निमापिमग्निं भ्रातरं सदमित्सखायम्।
ऋ० १०।७।३

३९. त्राता नो बोधि ददृशान आपिरभिख्याता मर्डिता सोम्यानाम्।
सखा पिता पितृतमः पितॄणां कर्तेमु लोकमुशते वयोधाः॥
ऋ० ४।१७।१७

४०. त्वं हि नः पिता वसो त्वं माता शतक्रतो बभूविथ।
अधा ते सुम्नमीमहे॥ ऋ० ८।९८।११

४१. अदितिर् द्यौरदितिरन्तरिक्षम्
अदितिर् माता स पिता स पुत्रः।
विश्वेदेवा अदितिः पंच जनाः
अदितिर् जातमदितिर् जनित्वम्॥ ऋ० १।८९।१०

४२. वयं धा ते त्वे इद्धिन्द्र विप्रा अपिष्मसि।
नहि त्वदन्यः पुरुहूत कश्चन मघवन्नस्ति मर्डिता॥
ऋ० ८।६६।१३

४३. अभ्यूर्णोति यन्नग्नं भिषक्ति विश्वं यत्तुरम्।
प्रेमन्धः ख्यन्निः श्रोणो भूत्॥ ऋ० ८।७९।२

४४. यभ्रातृत्वं सुदानवोऽध द्विता समान्या।
मातुर्गर्भे भरामहे॥ ऋ० ८।८३।८

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

तूही माता तुही पिता है, बन्धु सखा है प्रभो तुही !

तूही माता, तुही पिता है, बन्धु सखा है प्रभो तुही।
जितने नाते हैं इस जग में, सब नातों में एक तुही ।।
पिता रूप में तू ही पालक, सखा रूप में सुहृद तुही।
पुत्र रूप में त्राता है तू, दयाशील भ्राता तू ही ।।
जैसे पिता ज्ञान देता है, हमें ज्ञान दे प्रभू तुही।
कर कल्याण हमारा प्रभुवर, सुखका दाता प्रभू तुही ।।
सबका अपना, सबका प्यारा, सबका कर्ता एक तुही।
सबकी रक्षा करनेवाला, सबका आश्रय प्रभू तुही ।।
नहीं छिपा है तुझसे कुछ भी, अन्तर्यामी प्रभू तुही।
जीवनदाता पिता हमारा, और पितामह प्रभू तुही ।।
अदिति रूप में तूही प्रभुवर, अंतरिक्ष में बसा तुही।
सभी मानवों की तू माता, विश्वेदेवा प्रभू तुही ।।
जगती में अब तक जो जनमे, सब रूपों में प्रभू तुही।
आगे भी जो होंगे पैदा, सबके भीतर बसा तुही ।।
हम सब तेरे बेटे हैं मां, मिल जुलकर हम रहें सदा।
जन्मजात यह प्रेम हमारा, सदा बढ़ाता चल तूही ।।
तू ही सच्चा मित्र हमारा, सुखदाता है एक तुही।
किसे पुकारें हम संकट में, माता त्राता एक तुही ।।
अन्धे को दे रहा दृष्टि तू, लँगड़े को चलने की शक्ति।
रोगी को चगा करता है, धन्वन्तरि है एक तुही ।।
कृपा माँगते हैं हम तेरी, तू सबका कल्याण करे।
तुझसे बढ़कर हितू कौन है, स्नेही प्यारा एक तुही ।।
हम तेरे हैं तुही हमारा, सबसे प्यारा एक तुही।
ज्ञान, प्रेम और सुख से पूरित, करनेवाला एक तुही ।।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

प्रिय: प्रजानां भूयासम्

४५. ईशा वास्यं इदं सर्वं यत्किंच जगत्यां जगत्। यजु० ४०।१

४६. यं यद्वयं यवसादो जनानामहं यवाद उर्वज्रे अन्तः।
ऋ० १०।२७।९

४७. यस्तु सर्वाणि भूतान्यात्मन्येवानुपश्यति।
सर्वंभूतेषू चात्मानं ततो न वि चिकित्सति॥ यजु० ४०।६

४८. यस्मिन् सर्वाणि भूतानि आत्मैवाभूद्विजानतः।
तत्र को मोहः कः शोक एकत्वमनुपश्यतः॥ यजु० ४०।७

४९. प्रियः प्रजानां भूयासम्। अथ० १७।१।३

५०. प्रियः पशूनां भूयासम्। अथ० १७।१।४

५१. प्रियः समानानां भूयासम्। अथ० १७।१।५

५२. प्रियं मा कृणु देवेषु प्रियं राजसु मा कृणु।
प्रियं सर्वस्य पश्यत उत शूद्र उतार्ये॥ अथ० १९।६२।१

५३. पुराणां अनुवेनन्तं चरन्तं पापयामुया।
असूयन्नभ्यचाकशं तस्मा अस्पृहयं पुनः॥ ऋ० १०।१३५।२

५४. ता नः प्रजा सं दुह्तां समग्रा वाचो मधु पृथिवि धेहि मह्यम्।
अथ० १२।१।१६

५५. तिल्विलायध्वं उषसो विभातीर्यूयम्।
पात स्वस्तिभिः सदा नः॥ ऋ० ७।७८।५

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

प्रेम भाव भर दे प्रभु हममें, सबके प्यारे बन जावें

प्रेम भाव भर दे प्रभु हममें, सबके प्यारे बन जावें।
जगती के हर प्राणी की, आँखों के तारे बन जावें॥
घटघट में प्रभु ही रमता है, जड़ चेतन में बसा वही।
जीवन का यह तत्व समझकर, सबके स्नेही बन जावें॥
हर प्राणी के भीतर बैठे, परम प्रभू को हम देखें।
अपने उरके भीतर भी हम, उस प्रभु का दर्शन पावें॥
तिनके चरनेवाले पशु हों, अन्न और जौ-प्रेमी नर।
अन्तर्यामी ब्रह्म सभी से, आत्म भाव हम दरसावें॥
प्रभु ही तो सबमें रमते हैं, हम उनसे हैं अलग कहाँ ?
हम भी ब्रह्म रूप हैं, ऐसे, आत्मभाव से भर जावें॥
समदर्शी जो बनता मानव, निर्विकार बन जाता है।
हम भी ऐसी दृष्टी पाकर, निर्विकार अब बन जावें॥
आत्मरूप ही हैं सब प्राणी, रागद्वेष का प्रश्न कहाँ ?
घृणा मोह को दूर भगाकर, सबके प्रेमी बन जावें॥
गैया, गोरू पशु चौपाये, घोड़ा अथवा अन्य पशू।
सबसे करना स्नेह हमें है, सबके स्नेही बन जावें॥
जितने पशुप्राणी हैं जग में, और प्रजा भी है जितनी।
समगुणवाले या समधर्मा, सबके प्यारे बन जावें॥
ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्र या, किसी जाति का हो कोई।
अपना लें हम सभी किसी को, सबके प्रेमी बन जावें॥
पापों में जो लिप्त सदा हैं, औ भोगों में व्यस्त सदा।
मुक्तहस्त हो उन पर भी हम, प्रेम भाव ही बरसावें॥
पृथ्वीमाता तुझ पर रहते, जितने प्राणी हैं जगमें।
वे सब हमसे प्रेम करें, हम, सबके प्यारे बन जावें॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मा हिंसीः पुरुषं जगत्

५६. मा हिंसीः पुरुषं जगत् । यजु० १६।३

५७. सखायो मा रिषण्यत । साम० पू०, २४२

५८. मा हिंसीस्तन्वा प्रजाः । यजु० १२।३२

५९. अश्वं मा हिंसीः
इमं मा हिंसीः द्विपादं पशुं ।
मयुं पशुं,
इमं मा हिंसीरेकशफं पशुं ।। यजु० १३।४२,४७,४८

६०. माता रुद्राणां दुहिता वसूनां
स्वसाऽऽदित्यानां अमृतस्यनाभिः ।
प्र नु वोचं चिकितुषे जनाय
मा गां अनागामदितिं वधिष्ट ।। ऋ० ८।१०१।१५

६१. गां मा हिंसीरदितिं विराजम् । यजु० १३।४३

६२. घृतं दुहानामदितिं जनायाग्ने ।
मा हिंसीः परमे व्योमन् ।। यजु० १३।४९

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

हिंसा करनी नहीं किसी की, कोई भी हो प्राणी

हिंसा करनी नहीं किसी की, कोई भी हो प्राणी।
पूर्णरीति से इस जीवन में, हमें अहिंसा लानी॥

कभी किसी मानवकी हिंसा, नहीं भूलकर भी करनी।
पोष्य प्राणियों की हिंसा भी, हमको सदा बचानी॥

अदिति स्वरूपा गो माता है, अमृत नाभिवाली भू पर।
'गैया मैया' कहकर हमने शुद्ध अवध्या ही मानी॥

आदित्यों की बहिन और, रुद्रों की माता कहलाती।
वसुओं की बेटी है गैया, परम पूज्य हमने मानी॥

सदा हमें सुख देती है यह, दुग्ध और घृत की खानी।
कभी न इसको हिंसित करना, ऋषियों की है यह वाणी॥

मानव हो अथवा हो कोई, पशु तनधारी ही प्राणी।
नहीं सताना किसी जीव को, यह है वेदों की वाणी॥

गैया की तो बात हि क्या है, अश्व आदि जो पोष्य पशू।
सबसे हमें प्रेम करना है, यही भावना है लानी॥

दो पैरोंवाला हो अथवा, चार पदों का हो प्राणी।
कभी न उसकी हिंसा करना, वेदाज्ञा हमने जानी॥

रक्षा इनकी सदा करो तुम, सब अवध्य पशु हितकारी।
अग्नि देव के चरणों में बस, यही प्रार्थना है लानी॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सखा सख्ये वरेण्यः

६३. सखाय आ निषीदत। ऋ० १।२२।८

६४ सखा सख्ये वरेण्यः। ऋ० १।२६।३

६५. सखा सखीँरमुंचन्निरवद्यात्। ऋ० ३।३१।८

६६. ददताघ्नता जानता संगमेमहि। ऋ० ५।५१।१५

६७. न स सखा यो न ददाति सख्ये।
सचामुवे सचमानाय पित्वः॥ ऋ० १०।११७।४

६८. न दुरुक्ताय स्पृहयेत्। ऋ० १।४१।९

६९. यस्ति त्याज सचिविदं सखायं।
न तस्य वाच्यपि भागो अस्ति॥ ऋ० १०।७१।६

७०. उरुष्या णो परा दा अघायते जातवेदः।
दुराध्येऽऽऽमर्ताय॥ ऋ० ८।७१।७

७१. पवमानस्य ते वयं पवित्रमभ्युन्दतः।
सखित्व मा वृणीमहे॥ ऋ० ९।६१।४

७२. नः सखा सखिभ्यो वरि वः कृणोतु। ऋ० १०।४२।११

७३. रासि क्षयं रासि मित्रमस्मे। ऋ० २।११।१४

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सख्य भाव को बढ़ा परस्पर, सबको सुख पहुँचाना हैं

सख्य भाव को बढ़ा परस्पर, सबको सुख पहुँचाना है।
सखा-मित्र के साहचर्य से, जीवन सफल बनाना है॥

काम सभी मौकों पर देवें, सच्ची राह दिखावें जो।
ढूँढ़ ढूँढ़ कर ऐसे लोगों, से ही सख्य बढ़ाना है॥

हों उदार औ परम अहिंसक, दयाशील औ स्नेहभरे।
पापों से जो विरत करें, उनको ही सखा बनाना है॥

सच्चा सखा वही होता है, सदा साथ जो देता है।
नहीं साथ जो कभी छोड़ता, उसको सखा बनाना है॥

सुख में साथ बहुत देते हैं, दुःख में दूर भाग जाते।
गलत राह पर जो ले जाते, उनके पास न जाना है॥

सखा-धर्म है त्याग सिखाता, सखा सदा सुख पहुँचाता।
ऐसे सखा प्राप्त कर हमको, जीवन धन्य बनाना है॥

कटु-भाषी अनिष्ट-चिन्तक जन, पास न फटकें कभी प्रभो।
झूठे लोगों के कुसंग से, प्रभुवर हमें बचाना है॥

उसकी वाणी कभी न फलती, सखा-मित्र जो तजता है।
सखा हेतु तो हम सब को, अपना सर्वस्व लुटाना है॥

सच्चे सखा हमें दे प्रभुवर! सबसे सच्चा सखा तुही।
कृपासिक्त तेरा प्रसाद, हम सब मित्रों को पाना है॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मित्रस्य चक्षुषा समीक्षामहे

७४ मित्रस्य मा चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षन्ताम् ।
मित्रस्याऽहं चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षे ।
मित्रस्य चक्षुषा समीक्षामहे ॥ यजु० ३६।१८

७५. मित्रस्य मा चक्षुषेध्वम् । यजु० ५।३४

७६. यांश्च पश्यामि यांश्च न
तेषु मा सुमतिं कृधि ॥ अथ० १७।१।७

७७ विश्वा उत त्वया वयंधारा उदन्या इव ।
अति गाहेमहि द्विषः ॥ ऋ० २।७।३

७८. यदीक्षे तद् वनन्ति मा । अथ० २।१।५८

७९. विश्वं भवत्येकनीडम् । यजु० ३२।८

८०. यस्य ते विश्वमानुषः भूरेर्दत्तस्य वेदति ।
वसुसाहं तदाभर ॥ ऋ० ८।४५।४२

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मित्र-दृष्टि से देखूँ सबको, शत्रु न कोई रह जाये

मित्र-दृष्टि से देखूँ सबको, शत्रु न कोई रह जाये।
इस जगती के प्राणिमात्र से, मैत्री हमें बढ़ानी है॥

मित्र-भावना भरकर ही हम, एक दूसरे को देखें।
मित्र दृष्टि की दिव्य प्रेरणा, देव-कृपा से पानी है॥

आँखों से हम जिन्हें देखते, अथवा देख नहीं पाते।
प्राणवान हर प्राणी के प्रति, मित्र-भावना लानी है॥

जल की धारा छोड़ एक पथ, दूजे पर ज्यों जाती।
त्यों ही हमें द्वेष तज करके, मैत्री ही अपनानी है॥

जिस पर पड़े दृष्टि हम सबकी, वो ही प्रियतम बन जावे।
ऐसी मित्र-दृष्टि हम सबको, सबके प्रति उपजानी है॥

सच्चे सखा भले हों थोड़े, मित्र सभी बन सकते हैं।
अखिल विश्व में यही भावना, हमको अब फैलानी है॥

मित्र भावना ज्यों बढ़ती है, प्रेम भावना त्यों बढ़ती।
हर प्राणी को ला कुटुम्ब में, घर की परिधि बढ़ानी है॥

एक घोंसले में मिलकर हैं, रहते बहु प्राणी पक्षी।
विश्वनीड में उसी तरह, रहने की हमने ठानी है॥

विश्वमानवों को प्रभु भर दो, अपने शुभ वरदानों से।
मैत्री की यह शुद्ध भावना, हमें हृदय में लानी है॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मे मनः शिवसंकल्पमस्तु

८१. आ नो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतः। ऋ० १।८९।१

८२. यज्जाग्रतो दूरमुदैति दैवं तदु सुप्तस्य तथैवैति।
दूरंगमं ज्योतिषां ज्योतिरेकं तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु।।
यजु० ३४।१

८३. यत् प्रज्ञानमुत चेतो धृतिश्च यज्ज्योतिरंतरमृतं प्रजासु।
यस्मान्नऽऋते किंचन कर्म क्रियते तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु।।
यजु० ३४।३

८४. सुषारथिरश्वानिव यन्मनुष्यान्नेनीयतेऽभीषुभिर्वाजिनऽइव।
हृत्प्रतिष्ठं यदजिरं जविष्ठं तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु।।
यजु० ३४।६

८५. परोऽपेहि मनस्पाप किमशास्तानि शंससि।
परे हि न त्वा कामये।। अथ० ६।४५।१

८६. उलूकयातुं शुशुलूक यातुं जहि श्वयातुमुप कोकयातुम।
सुपर्ण यातुमुत गृध्र यातुं दृष देव प्र मृण रक्ष इन्द्र।।
ऋ० ७।१०४।२२

८७. अग्ने रक्षा णो अंहसः प्रति स्म देव रीषतः।
तपिष्ठैरजरो दह।। साम० पू०, २४

८८. अग्ने नय सुपथा रायेऽअस्मान् विश्वानि देव वयुनानि विद्वान्।
युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठां ते नमऽउक्तिं विधेम।।
य० ७।४३

८९. वयमादित्य व्रते तवानागसो अदितये स्याम। ऋ० १।२४।१५

९०. धियो यो नः प्रचोदयात्। ऋ० ३।६२।१०

९१. राया हिरण्यया मतिरियम वृकाय शवसे। ऋ० ७।६६।८

९२. भद्रं मनः कृणुष्व। साम० उ०, १५६०

९३. विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव।
यद् भद्रं तन्न आसुव।। ऋ० ५।८२।५

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

निर्विकार रहकर मन मेरा, शिव-संकल्प करे

जो प्रकाशका पुंज सदा ही दौड़ लगाया है करता,
जगता हो या हो सपने में, हर दम भागा ही करता,
दूर दूर दौड़ा करता है, कर्मों में प्रवृत्त करता।
शक्तिमान ऐसा मन मेरा, शिव-संकल्प करे।
सद्भावों से पूरित हो मन, शुभ संकल्प करे ॥
ज्ञान बुद्धि का है उत्पादक, स्मृति का अनुपम साधन।
साक्षी रहकर जो आत्मा का, सब कुछ है देखा करता ॥
जिसके बिना कर्म कोई भी, हो सकता है कभी नहीं।
ज्योतिमान ऐसा मन मेरा, शिव-संकल्प करे।
शुभ संकल्प करे मन मेरा, शिव-संकल्प करे ॥
घोड़ों की लगाम मुट्ठी में, चतुर सारथी है रखता।
मन भी त्यों ही हर मानव को, वश में है अपने रखता ॥
सबके भीतर मन जाता है, जरा जीर्णता से है मुक्त।
वेगवान ऐसा मन मेरा, शिव-संकल्प करे।
सद्भावों से प्रेरित होकर, शुभ-संकल्प करे ॥
पाप वासना कभी भूल से, यदि इस मनमें आ जावे।
परोऽपेहि तू, दूर भाग तू—कहकर मैं दूँ भगा उसे ॥
गीध श्वान की तरह न नाचूं, हो विकार से ग्रस्त कभी।
पाप-मुक्त रहकर मन मेरा, शिव-संकल्प करे।
शिव-संकल्प करे मन मेरा, शुभ-संकल्प करे ॥
कुटिल मार्ग से हमें बचा प्रभु, सदानन्द पथ से ले चल।
उत्तम गुण स्वभाव कर्मों में, प्रेरित हमको करता चल ॥
दुराचार औ पाप भस्म कर, सद्गुण सद्विवेक भर दे।
निर्विकार रहकर मन मेरा, शिव-संकल्प करे।
शुभ संकल्प करे मन मेरा, शिव-संकल्प करे ॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

ऋतस्य पथा प्रेत

९४. ऋतस्य पथा प्रेत । य० ७।४५

९५. ऋतं चिकित्व ऋतमिच्चिद्धयृतस्य धारा । ऋ० ५।१२।२

९६. ऋत धीतय आगत सत्य धर्म्मणो अध्वरम् । ऋ० ५।५१।२

९७. ऋतस्य दृळहा धरुणानि सन्ति पुरुणि चन्द्रा वपुषे वपूंषि ।
ऋतेन दीर्घमिषणन्त पृक्ष ऋतेन गाव ऋतमा विवेशुः ॥
ऋ० ४।२३।९

९८. सत्यमहं गभीरः काव्येन सत्यं जातेनास्मि जातवेदाः ।
अथ० ५।११।३

९९. सत्यं तत्तुर्वशे यदौ विदानो अह्नवाय्यम् ।
व्यानट् तुर्वणे शमि ॥ ऋ० ८।४५।२७

१००. सुविज्ञानं चिकितुषे जनाय सच्चासच्च वचसी पस्पृधाते ।
तयोर्यत्सत्यं यतरदृजीयस्तदित्सोमोऽवति हन्त्यासत् ॥
ऋ० ७।१०४।१२

१०१. सत्यस्य नावः सुकृतमपीपरत् । ऋ० ९।७३।१

१०२. सत्येनोत्तभिताभूमिः सूर्येणोत्तभिता द्यौः ।
ऋतेनादित्यास्तिष्ठन्ति दिविसोमो अधिश्रितः॥ ऋ० १०।८५।१

१०३. व्रतेन दीक्षामाप्नोति दीक्षयाप्नोति दक्षिणाम् ।
दक्षिणा श्रद्धामाप्नोति श्रद्धया सत्यमाप्यते ॥ य० १९।३०

१०४. अग्ने व्रतपते व्रतं चरिष्यामि तच्छकेयं तन्मे राध्यताम् ।
इदमहमनृतात् सत्यमुपैमि ॥ य० १।५

१०५. ऋतावान ऋतजाता ऋतावृधोघोरासो अनृतद्विषः ।
तेषां वः सुम्ने सुच्छर्दिष्टमे नरः स्याम ये च सूरयः ॥
ऋ० ७।६६।१३

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

ऋत को जानो, सत पहचानो, ऋतधर्मा तुम बनो सभी

ऋत को जानो, सत पहचानो, ऋत-धर्मा तुम बनो सभी।
परम अहिंसक ऋतधर्मा हो, सत्य ब्रह्म को पाते हैं॥

जीवन जैसे जलपर निर्भर, वैसे निर्भर ऋत सत पर।
ऋत के जो पालक हैं जग में, विद्या वैभव पाते हैं॥

ज्ञानप्रदाता सत्य रूप हूँ, सत्य मार्ग ही है मेरा।
परमेश्वर की यही घोषणा, वेद ऋचा में पाते हैं॥

सत्य ज्ञानमय, सत्य कर्ममय, ऋतमय जीवन रहे सदा।
सत् साधक को देव सदा, कल्याण ओर ले जाते हैं॥

जीवन में हम देखा करते, सत्य झूठ में होड़ लगी।
परमपिता सत की नैया को, हरदम पार लगाते हैं॥

ज्यों आदित्य प्रतिष्ठित ऋत पर, वैसे पृथ्वी है सत पर।
बड़ी तपस्या से ही ऋत-सत, जन्म जगत में पाते हैं॥

व्रत दीक्षा दक्षिणा मार्ग, श्रद्धा तक सबको ले जाता।
श्रद्धा पथ के जो अनुगामी, वही सत्य को पाते हैं॥

व्रतपति हो तुम अग्निदेव, तुम सफल करो मेरे व्रत को।
सत्य-प्राप्ति के लिए शरण में, हम सब तेरी आते हैं॥

ऋतावान ऋतदाता देवो, हमें सत्य दो, ऋत दो तुम।
चरणों में हम सदा तुम्हारे, यही निवेदन लाते हैं॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेत्

१०६. कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेत् शतं समाः। य० ४०।२

१०७. पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शतं श्रृणुयाम शरदः शतं।
प्र ब्रवाम शरदः शतमदीनाः स्याम शरदः शतम्॥ य० ३६।२४

१०८. ऊर्वो रोजो जङ्घयोर्जवः पादयोः प्रतिष्ठा।
अरिष्टानि मे सर्वात्मानिभ्रष्टः॥ अथ० १९।६०।२

१०९. भद्रं कर्णेभिः श्रृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः।
स्थिरैरंगैस्तुष्टुवांसस्तनूभिर्व्यशेम देवहितं यदायुः॥
ऋ० १।८९।८

११०. इच्छन्ति देवाः सुन्वन्तं न स्वप्नाय स्पृहयन्ति।
यन्ति प्रमादमतन्द्रा॥ ऋ० ८।२।१८

१११. यश्चकार जजार सः। अथ० १०।८।२६

११२. वीरयध्वं प्र तरता। अथ० १२।२।२६

११३. भूत्यै जागरणं अभूत्यै स्वपनम्। य० ३०।१७

११४. न ऋते श्रान्तस्य सख्याय देवाः। ऋ० ४।३३।११

११५. कृतं मे दक्षिणे हस्ते जयो मे सव्य आहितः। अथ० ७।५२।८

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सदा कर्म में निरत रहें हम, श्रम से पैदा कर खावें

सदा कर्म में निरत रहें हम, श्रम से पैदा कर खावें।
शत वसंत से सदा उल्लसित, मधुमय जीवन हम पावें ॥

भद्र सुनें हम, भद्र कहें हम, भद्र करें सब काम।
स्वस्थ और दीर्घायु प्राप्त कर, स्वस्ति शान्ति को हम पावें ॥

शत वर्षों तक सुख से जीवें, अंग अंग सब सबल रहें।
तन मन दोनों से चंगे रह, जीवन में मस्ती लावें ॥

हो अजेय आतमा हमारी, गौरव से नित भरी रहे।
जीवन में हम कभी किसी को, दीनभाव ना दिखलावें ॥

सत्कर्मों में सदा लीन रह, हँसी खुशी से मस्त रहें।
शक्ती से उल्लसित रहें नित, मस्ती के गाने गावें ॥

उद्योगी जन ही जगती में, सबसे हैं ऊपर उठते।
श्रमपूरित जीवन जीने की, सदा प्रेरणा हम पावें ॥

कोई प्यार न करता उनको, जो आलसी प्रमादी हैं।
हैं पुरुषार्थी जो जीवन में, वही सदा शुभ फल पावें ॥

आलस में जो सोते रहते, वे दरिद्र बन जाते हैं।
जाग्रत रहकर कर्म करें जो, वे ही सुख सम्पति पावें ॥

हो प्रसन्न प्रभु वर दो हमको, श्रमधर्मा हम रहें सदा।
दोनों हाथों से श्रम करके, पूर्ण सफलता को पावें ॥

श्रममय जीवन में गौरव है, हमें यही अब करना है।
वीर और पुरुषार्थी बनकर, धन्य धन्य हम हो जावें ॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मधु वाता ऋतायते

११६. मधु वाता ऋतायते मधु क्षरन्ति सिन्धवः।
माध्वीर्नः सन्त्वोषधीः ॥ ऋ० १।९०।६

११७. मधुनक्तमुतोषसो मधु मत्पार्थिवं रजः।
मधु द्यौरस्तु नः पिता ॥ ऋ० १।९०।७

११८. मधुमान्नो वनस्पतिर्मधुमाँ अस्तु सूर्यः।
माध्वीर्गावो भवन्तु नः ॥ ऋ० १।९०।८

११९. मधुमतीरोषधीर्द्याव आपो मधुमन्नो भवत्वन्तरिक्षम्।
क्षेत्रस्यपतिर्मधुमान्नो अस्त्वरिष्यन्तो अन्वेनं चरेम् ॥
ऋ० ४।५७।३

१२०. मधुमन्मे निक्रमणं मधुमन्मे परायणम्। अथ० १।३४।३

१२१. मधुमन्मे परायणम् मधुमत्पुनरायनम्।
ता नो देवा देवतया युवं मधुमतस्कृतम् ॥ ऋ० १०।२४।६

१२२. स्वादो पितो मधो पितो वयं त्वा ववृमहे।
अस्माकमविता भव ॥ ऋ० १।१८७।२

१२३. शिवं मह्यं मधुमदस्त्वन्नम्। अथ० ६।७१।३

१२४. उप नः पितवा चर शिवः शिवाभिरूतिभिः।
मयोभुरद्विषेण्यः सखा सुशेवो अद्वयाः ॥ ऋ० १।१८७।३

१२५. आपो हि ष्ठा मयोभुवस्ता न ऊर्जे दधातन।
म हे रणाय चक्षसे ॥ ऋ० १०।९।१

१२६. इदमापः प्र वहत यत्किंच दुरितं मयि।
यद्वाहमभिदुद्रोह यद्वा शेफ उतानृतम् ॥ ऋ० १०।९।८

१२७. अश्विना सारघेण मा मधुनाङ्क्तं शुभस्पती।
यथाभर्गस्वतीं वाचमावदानि जनाँ अनु ॥ अथ० ६।६९।२

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मधुमय जीवन रहे हमारा, शान्तिसौख्य से सदा भरा

मधुमय जीवन रहे हमारा, शान्ति सौख्य से सदा भरा।
आवागमन सभी हो मधुमय, प्रभु हम पर मधु बरसावें ।।

ऊषा मधुमय रहे, रात्रि भी, मधु से ही भरपूर रहे।
पृथ्वी के कण कण के भीतर, हम मधु के दर्शन पावें ।।

वायु बहे हम पर मधुमय हो, नदियाँ सागर हों मधुमय।
वृक्ष, वनस्पति औषधियाँ भी, हम पर नित मधु बरसावें ।।

माता पिता समान हमारा, सविता पालन करें सदा।
उनके मधुमय किरण-करों को, अपने शिर पर हम पावें ।।

जल हो मधुमय, औषधि मधुमय, मधु ही हो सर्वत्र भरा।
अन्न धान्य भी उन्हीं क्षेत्रपति, से हम सब मधुमय पावें ।।

जिसको खा-खाकर हम पलते, और पुष्ट होते हैं नित्य।
अन्न देव को परम हितैषी, हम अपना प्रेमी पावें ।।

जो स्वादिष्ट और मधुमय जल, रात दिवस हैं हम पीते।
स्वास्थ्य और बलदाता, उसको, हम अपना रक्षक पावें ।।

हे जलदेव कृपा से तेरी, बाहर भीतर स्वच्छ बनें।
अन्तरमल धुल जाने से हम, अपने को निर्मल पावें ।।

अश्विनिद्वय तुम कृपा करो, हम सबको ही मधु से भर दो।
सभी जगह अपनी वाणी से, हम मधु ही झरता पावें ।।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

यद् वदामि मधुमत् वदामि

१२८. उग्रं वचोऽअपावधीत्। य० ५।८

१२९. सक्तुमिव तितउना पुनन्तो यत्र धीरा मनसा वाच मक्रत्।
अत्रा सखायः सख्यानि जानते भद्रैषां लक्ष्मीर्निहिताधि वाचि॥
ऋ० १०।७१।२

१३०. प्रियाय प्रियवादिनम्। य० ३०।१३

१३१. त्वं देहि सहस्रिणं रयिं नोऽद्रोघेण वचसा सत्यमग्ने।
ऋ० ३।१४।६

१३२. अस्मे धेहि द्युमतीं वाचमासन् बृहस्पते अनमीवामिषिराम्।
ऋ० १०।९८।३

१३३. जिह्वा मे भद्रं वाङ् महः। य० २०।६

१३४. यद् वदामि मधुमत् वदामि। अथ० १२।१।५८

१३५. वाचा वदामि मधुमद् भूयासं मधु संदृशः। अथ० १।३४।३

१३६. मधोरस्मि मधुतरो मधुद्यान्मधुमत्तरः। अथ० १।३४।४

१३७. जिह्वाया अग्रे मधु मे जिह्वा मूले मधूलकम्। अथ० १।३४।२

१३८. स्वाद्मानं वाचः सुदिनत्वमह्नाम्। ऋ० २।२१।६

१३९. वाचस्पतिर्वाचं नः स्वदतु। य० ३०।१

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

वाणी में मधु घोल मनुआं, मीठा-मीठा बोल

कड़वी बात कभी मत कह तू, कड़वा शब्द न बोल।
तीखी बातें कहने को तू, कभी न मुख को खोल॥ मनुआं० ॥

प्रेमपूर्ण हो, सत्यपूर्ण हो, सत्पथ पर जो ले जाती।
ज्ञान-दीप से हो आलोकित, ऐसी वाणी बोल॥ मनुआं० ॥

भलीभाँति तू सोच समझकर, अपनी जिभिआ खोल।
यही मार्ग है ज्ञानी जनका, छान-छान कर बोल॥ मनुआं० ॥

मीठी वाणी है कल्याणी, मैत्री औ लक्ष्मी लाती।
सबका प्रिय यदि बनना है तो, हर दम मीठा बोल॥ मनुआं० ॥

मधु है मीठा, गन्ना मीठा, चीनी मीठी, गुड़ है मीठा।
मिश्री और मुलेठी मीठी, ऐसा मीठा बोल॥ मनुआं० ॥

इन्द्र अग्नि देवों से हम सब, यही प्रार्थना हैं करते।
मीठा मीठा ही हम बोलें, हृदय तुला पर तोल॥ मनुआं० ॥

भीतर मीठा, ऊपर मीठा, घर में मीठा, बाहर मीठा।
मीठी हो हर बात हमारी, जीवन हो अनमोल॥ मनुआं० ॥

जो कुछ वाणी मुख से निकले, हो मधु से भरपूर।
जिह्वा में जड़ से ऊपर तक, मधुमिश्री ही घोल॥ मनुआं० ॥

हम पर ऐसी कृपा करो तुम, हे वाचस्पति बृहस्पते।
मधु भर दो तुम घट में मेरे, अन्तरपट दो खोल॥ मनुआं० ॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

समापो हृदयानि नौ

१४०. समंजन्तु विश्वे देवाः समापो हृदयानि नौ।
सं मातरिश्वा सं धाता समु देष्ट्री दधातु नौ ।।
ऋ० १०।८५।४७

१४१. गृभ्णामि ते सौभागत्वाय हस्तं मया पत्या जरदष्टिर्यथासः।
भगो अर्यमा सविता पुरन्धिर्मह्यं त्वं दुर्गार्हपत्याय देवाः ।।
ऋ० १०।८५।३६

१४२. यौ सेतृभिररज्जुभिः सिनीथः। ऋ० ७।८४।२

१४३. ज्यायस्वन्तश्चित्तिनो मा वि यौष्ट
संराधयन्तः सधुराश्चरन्तः।
अन्यो अन्यस्मै वल्गु वदन्त एत
सध्रीचीनान् वः संमनसस्कृणोमि ।। अथ० ३।३०।५

१४४. परि त्वा परिपतत्नुनेक्षुणागामविद्विषे।
यथा मां कामिन्यसो यथा मन्नापगा असः ।। अथ० १।३४।५

१४५, इहैव स्तं मा वि यौष्टं विश्वमायुर्व्यश्नुतम्।
क्रीळन्तौ पुत्रैर्नप्तृभिर्मोदमानौ स्वे गृहे ।। ऋ० १०।८५।४२

१४६. स्योनाद्योनेरधि बुध्यमानौ हसामुदौ महसा मोदमानौ।
सुगू सुपुत्रौ सुगृहौ तराथो जीवावषसो विभातीः ।।
अथ० १४।२।४३

१४७. आ नः प्रजां जनयतु प्रजापतिराजरसाय समनक्त्वर्यमा।
अदुर्मंगलीः पतिलोकमाविश शं नो भव द्विपदे शं चतुष्पदे ।।
ऋ० १०।८५।४३

१४८. स्वस्ति पंथामनु चरेम सूर्याचन्द्रमसाविव। ऋ० ५।५१।१५

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

पति पत्नी हों एक प्राण-तन, दूध में जैसे पानी

पति पत्नी हों एक प्राण-तन, दूध में जैसे पानी।
एक दूसरे पर न्यौछावर, जैसे राजा रानी॥

पति हो सच्चा कर्मवीर, पत्नी हो घर की रानी।
बँधे रहें ये प्रेम रज्जु से, एक प्राण—दो प्राणी॥

पाणिग्रहण के समय प्रतिज्ञा, पति की, सबने जानी।
एक जुएं के बैल बनेंगे, हम दोनों कल्याणी॥

हम दोनों को मिल करके ही, घर की नाव चलानी।
प्रभु की यह आज्ञा है देवी, हमको शीश चढ़ानी॥

सप्तपदी में साथ-साथ चल, हमने जी में ठानी।
आजीवन हम साथ रहेंगे, कभी न हो विलगानी॥

रस से जैसे भरी ईख है, वैसी है तू रानी।
मुझ में भी मिठास यह अपनी, भर दे हे कल्याणी॥

वैर आदि की बुरी भावना, हमको खोद बहानी।
मानव से चौपायों तक में, प्रेम-भावना लानी॥

हर प्रभात आनन्दपूर्ण हो, सुखी रहें सब प्राणी।
गुरुजन की आशीष हमें यह, सच कर है दिखलानी॥

स्वयं सुखी रह, सबको सुख दे, सबकी आशिष पानी।
सुख, आनन्द, शान्ति की, घर में, हमें त्रिवेणी लानी॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

स्योना भव श्वशुरेभ्यः

१४९. गृहान्गच्छ गृहपत्नी यथासो वशिनी ।
त्वं विदथमा वदासि ॥ ऋ० १०।८५।२६

१५०. सुमंगली प्रतरणी गृहाणां सुशेवा पत्ये श्वशुराय शं भूः ।
स्योना श्वश्र्वै प्र गृहान् विशेमान् ॥ अथ० १४।२।२६

१५१. प्र बुध्यस्व सुबुधा बुध्यमाना दीर्घायुत्वाय शतशारदाय ।
गृहान् गच्छ गृहपत्नी यथासो दीर्घन्त आयुः सविता कृणोतु ॥
अथ० १४।२।७५

१५२. सुमंगलीरियं वधूरिमां समेत पश्यत ।
सौभाग्यमस्यै दत्त्वायाथास्तं वि परे तन ॥ ऋ० १०।८५।३३

१५३. सं काशयामि वहतुं ब्रह्मणा गृहैरघोरेण चक्षुषा मित्रियेण ।
पर्याणद्धं विश्वरूपं यदस्ति स्योनं पतिभ्यः सविता तत् कृणोतु ॥
अथ० १४।२।१२

१५४. अघोरचक्षुरपतिघ्न्येधि शिवा पशुभ्यः सुमनाः सुवर्चाः ।
वीरसूर्देवृकामा स्योना शं नो द्विपदे शं चतुष्पदे ॥
ऋ० १०।८५।४४

१५५. सम्राज्ञी श्वशुरे भव सम्राज्ञी श्वश्र्वां भव ।
ननान्दरि सम्राज्ञी भव, सम्राज्ञी अधिदेवृषु ॥
ऋ० १०।८५।४६

१५६. स्योना भव श्वशुरेभ्यः स्योना पत्येगृहेभ्यः ।
स्योनास्यै सर्वस्यै विशे स्योना पुष्टायैषां भव ॥
अथ० १४।२।२७

१५७. अभ्रातृघ्नीं वरुणापशुघ्नीं बृहस्पते ।
इन्द्रापतिघ्नीं पुत्रिणीमास्मभ्यं सवितर्वह ॥ अथ० १४।१।६२

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

रानी बहू स्वर्ग कर घर को, प्रेम प्यार से भर दे

रानी बहू, स्वर्ग कर घर को, प्रेम प्यार से भर दे।
पतिगृह की साम्राज्ञी बनाकर, घर मंगलमय कर दे ।।

सेवा द्वारा सास ससुर का, जीवन सुखमय कर दे।
पति की प्यारी बनकर रह तू, सबका संकट हर दे ।।

देवर ननदों को अपनाकर, स्नेह प्यार से भर दे।
छोटे बड़े सभी परिजन पर, प्रेम की वर्षा कर दे ।।

मान बड़ाई देकर सबको, सबका जी तू भर दे।
नौकर चाकर गो गोरू पर, हाथ प्रेम का धर दे ।।

सबके दुःख-सुख में शामिल हो, सबको तू खुश कर दे।
प्रेमभरी मीठी वाणी से, सब पर जादू कर दे ।।

सभी तुझे तन मन से चाहें ऐसी सेवा कर दे।
तू सुमंगली तू सुलक्षणा, इसको साबित कर दे ।।

त्याग और सेवा द्वारा तू, घर में आनन्द भर दे।
तू आनन्दमयी हो सबको, ऐसा कौशल कर दे ।।

शील स्नेह से सदा भरी रह, कुल को उज्ज्वल कर दे।
सबको अपने वश में रखकर, घर में वैभव भर दे ।।

बलशाली सुन्दर शिशुओं से, घर भर, मंगल कर दे।
सविता तुझ पर कृपा करे, दीर्घायु कीर्ति का वर दे ।।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

स्वस्ति मात्र उत पित्रे

१५८. सायं प्रातः सौमनसो वो अस्तु । अथ० ३।३०।७

१५९ सहृदयं सांमनस्यमविद्वेषं कृणोमि वः ।
अन्यो अन्यमभि हर्यत वत्सं जातमिवाघ्न्या ।। अथ० ३।३०।१

१६०. अनुव्रतः पितुः पुत्रो माता भवतु संमनाः ।
जाया पत्ये मधुमतीं वाचं वदतु शन्तिवाम् ।। अथ० ३।३०।२

१६१. मा भ्राता भ्रातरं द्विक्षन्मा स्वसारमुत स्वसा ।
सम्यंचः सव्रता भूत्वा वाचं वदत भद्रया ।। अथ० ३।३०।३

१६२. अघोरचक्षुरपतिघ्नी स्योना शग्मा सुशेवा सुयमा गृहेभ्यः ।
वीरसूर्देवृकामा सं त्वयैधिषीमहि सुमनस्यमाना ।।
अथ० १४।२।१७

१६३. संमनसौ भूत्वा सखायाविव सचावहै । अथ० ६।४२।१

१६४. प्रियो विशामत्तिथिर्मानुषीणाम् । ऋ० ५।१।९

१६५. मार्जाल्यो मृज्यते स्वे दमूनाः ।
कवि प्रशस्तो अतिथिः शिवो नः ।। ऋ० ५।१।८

१६६. आ गावो अग्मन्नुत भद्रमक्रन्त्व सीदन्तु गोष्ठे रणयन्त्वस्मे ।
प्रजावतीः पुरुरूपा इह स्युः इन्द्राय पूर्वी रुषसो दुहानाः ।।
ऋ० ६।२८।१

१६७. स्वस्ति मात्र उत पित्रे नो अस्तु । अथ० १।३१।४

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

हो परिवार प्रेम से पूरित, सदा रहे आनन्द भरा

हो परिवार प्रेम से पूरित, सदा रहे आनन्द भरा।
सौमनस्य के ही दर्शन हम, रात दिवस उसमें पावें॥

हाल के जाये बछड़े को, ज्यों गैया करती प्यार।
वैसा उत्कट प्रेम सभी को, घर में हम करते पावें॥

माता पिता बहिन औ भाई, बेटे बेटी बहू स्वजन।
एक दूसरे पर न्यौछावर, होते हम सबको पावें॥

पुत्र एकमत हो माता से, चले पिता के भी अनुकूल।
भाई बहिनों को आपस में, प्रेम लुटाते हम पावें॥

मीठी बोली ही सब बोलें, पति पत्नी भाई बहिनें।
मतभेदों की कहीं न कोई, छाया हम पड़ते पावें॥

गृह-कौशल में निपुण बहू हो, सबकी सेवा में तत्पर।
मीठा ही व्यवहार सभी से, उसको हम करते पावें॥

होता रहे अतिथि का स्वागत, करें हमारा वे कल्याण।
गोष्ठों में हम गोमाता को, मंगल-ध्वनि करते पावें॥

माता पिता गाय गोरू नर, सुख से सब भरपूर रहें।
सबका हो कल्याण जगत् में, स्वस्ति सभी प्राणी पावें॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

माता भूमिः पुत्रो अहं पृथिव्याः

१६८. नमो मात्रे पृथिव्यै नमो मात्रे पृथिव्या ।
कृष्यै त्वा क्षेमाय त्वा रय्यै त्वा पोषाय त्वा ॥ य० ९।२२

१६९. माता भूमिः पुत्रो अहं पृथिव्याः ।
पर्जन्यः पिता स उ नः पिपर्तु ॥ अथ० १२।१।१२

१७०. यस्यां समुद्र उत सिंधुरापो यस्यामन्नं कृष्टयः संबभूवुः ।
यस्यामिदं जिन्वति प्राणदेजत् सा नो भूमिः पूर्वं पेये दधातु ॥
अथ० १२।१।३

१७१. यस्यामन्नं व्रीहियवौ यस्या इमाः पंच कृष्टयः ।
भूम्यै पर्जन्यपत्न्यै नमोऽस्तु वर्षमेदसे ॥
अथ० १२।१।४२

१७२. सुऽसस्याः कृषीष्कृधि । य० ४।१०

१७३. क्षेत्रस्य पतिना वयं हितेनेव जयामसि ।
गामश्वं पोषयित्न्वा स नो मृळातीदृशे ॥ ऋ० ४।५७।१

१७४. धर्मासि सुधर्मामेन्यस्मे नृम्णानि धारय । य० ३८।१४

१७५. शुनं वाहाः शुनं नरः शुनं कृषतु लाङ्गलम् ।
शुनं वरत्रा बध्यन्तां शुनमष्ट्रामुदिङ्गय ॥ ऋ० ४।५७।४

१७६. इन्द्रः सीतां नि गृह्णातु तां पूषाऽनु यच्छतु ।
सा नः पयस्वती दुहामुत्तरामुत्तरां समाम् ॥ ऋ० ४।५७।७

१७७. शुनं नः फाला वि कृषन्तु भूमिं शुनं कीनाशा अभि यन्तु वाहैः ।
शुनं पर्जन्यो मधुना पयोभिः शुनासीरा शुनमस्मासु धत्तम् ॥
ऋ० ४।५७।८

१७८. भूमे मातर्नि धेहि मा भद्रया सु प्रतिष्ठितम् ।
संविदाना दिवा कवे श्रियां मा धेहि भूत्याम् ॥ अथ० १२।१।६३

१७९. यस्ते गंधः पृथिवि संबभूव यं बिभ्रत्योषधयो यमापः ।
यं गंधर्वा अप्सरसश्च भेजिरे तेन मा सुरभिं कृणु ।
मा नो द्विक्षत कश्चन ॥ अथ० १२।१।२३

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

धरती माता सुत हम तेरे, कृषि-कर्मा हम बनें सभी

धरती माता सुत हम तेरे, कृषिकर्मा हम बनें सभी।
तेरी सेवा में लग कर हम, धन समृद्धि औ बल पावें॥

पृथ्वी माता तुझे नमन है, बार बार है नमन तुझे।
तुझसे ही हम सभी तरह का, रक्षण औ पोषण पावें॥

पिता तुल्य पर्जन्यदेव तुम, हम पर ऐसी कृपा करो।
हरे-भरे खेतों में जिससे, अच्छी फसलें लहरावें॥

गोदी में जिनकी हम पलते, अन्न धान्य जिनसे पाते।
वे समुद्र तक फैली भू मां, निज विभूतियां बरसावें॥

जो चावल गेहूँ जुआर सब, हैं धरती से ही उगते।
जीव जन्तु सब धरती माता, से ही निज पोषण पावें॥

क्षेत्रपती हैं मित्र हमारे, हम पर कृपा करें निशिदिन।
गाय, अश्व, नर–सभी जीव, उनसे चारा, भोजन पावें॥

द्यूत आदि दुर्व्यसनों से जो, नष्ट हो रहे हैं अतिशय।
कृषि-सेवा करके ही वे सब, अन्न, गऊ, गृह सुख पावें॥

कृषक सुखी हों, बैल सुखी हों, बीज भूमि औजार सुखी।
कृषि करने के जितने साधन, वे सब सुखमय बन जावें॥

कर कल्याण हमारा भू माँ, अपने सौरभ से भर दे।
इस धरती पर कहीं न कोई, हम अपना वैरी पावें॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

स्वस्ति गोभ्यो जगते पुरुषेभ्यः

१८०. स्वस्ति गोभ्यो जगते पुरुषेभ्यः। अथ० १।३१।४

१८१. गोभिष्टरेमामतिं दुरेवां यवेन क्षुधं पुरुहूत विश्वाम् ।
ऋ० १०।४२।१०

१८२. सूयवसाद् भगवती हि भूया अथो वयं भगवन्तः स्याम।
अद्धितृणमघ्न्ये विश्वदानीं पिब शुद्धमुदकमाचरन्ती ॥
ऋ० १।१६४।४०

१८३. महि ज्योतिर्निहितं वक्षणास्वामा पक्वं चरति बिभ्रती गौः।
विश्वं स्वाद्म सम्भृतमुस्रियायां यत्सीमिन्द्रो अदधात भोजनाय ॥
ऋ० ३।३०।१४

१८४. यूयं गावो मेदयथा कृशं चिदश्रीरं चित्कृणुथा सुप्रतीकम् ।
भद्रं गृहं कृणुथ भद्र वाचः बृहद् वो वय उच्यते सभासु ॥
ऋ० ६।२८।६

१८५. न ता नशन्ति न दभाति तस्करो नासामित्रो व्यथिरा दधर्षति ।
देवांश्च याभिर्यजते ददातिच ज्योगित्ताभिः सचते गोपतिस्सह ॥
ऋ० ६।२८।३

१८६. एनीर्धाना हरिणीः श्येनीरस्य कृष्णा धाना रोहिणीर्धेनवस्ते ।
तिलवत्सा ऊर्जमस्मै दुहाना विश्वाहा सन्त्वनपस्फुरन्तीः ॥
अथ० १८।४।३४

१८७. प्रजावतीः सूयवसं रिशन्तीः शुद्धा अपः सुप्रपाणे पिबन्तीः ।
मा वः स्तेन ईशत माघशंसः परि वो हेती रुद्रस्य वृज्याः ॥
ऋ० ६।२८।७

१८८. ऋतेन ऋतं नियतमीळ आ गोरामा सचा मधुमत्पक्वमग्ने ।
कृष्णा सती रुशता धासिनैषा जामर्येण पयसा पीपाय ॥
ऋ० ४।३।९

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मंगलदात्री ओ गो माता, जग में तू प्रमोद भर दे

मंगलदात्री ओ गो माता, जग में तू प्रमोद भर दे।
तेरी कृपादृष्टि से हम सब, सुख शांती प्रमोद पावें।।

दुर्मति मिटा, स्वस्थ औ सुन्दर, करती रहती हमें सदा।
दूध दही घी से घर भरते, गो माता को हम पावें।।

तिनके चरती, निर्मल जल पी, हमें दूध देती है जो।
उसके उपकारों का लेखा, कभी नहीं हम कर पावें।।

पोषण करती है सब जग का, दूध दही से गो माता।
निर्भय होकर उसे विचरते, सारे जग में हम पावें।।

श्यामा सुरभी हो या कपिला, अथवा रोहिणि हो कोई।
परम पुष्टिकर श्वेत दुग्ध हम, गोमाता से नित पावें।।

कैसा मीठा दुग्ध तेरा है, कौन करे वर्णन उसका।
जगती की सारी मिठास हम, तेरे ही पय में पावें।।

तू सौभाग्यदायिनी है माँ, हम पर करती रहे कृपा।
दे तू हमको बैल शक्तिमय, जिससे हम कृषि कर पावें।।

यही प्रार्थना है नित प्रभु से, गोमाताएँ सुखी रहें।
चोर और दुखदाता प्राणी, कभी न उनको ले जावें।।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

रमन्तां पुण्या लक्ष्मीः

१८९. रमंतां पुण्या लक्ष्मीः । अथ० ७।११५।४

१९०. प्र पतेतः पापि लक्ष्मि । अथ० ७।११५।१

१९१. श्रमेण तपसा सृष्टा ब्रह्मणा वित्त ऋते श्रिता । अथ० १२।५।१

१९२. परि चिन्मर्त्तो द्रविणं ममन्यादृतस्य पथा नमसा विवासेत् ।
ऋ० १०।३१।२

१९३. अग्निना रयिमश्नवत् पोषमेव दिवेदिवे ।
यशसं वीरवत्तमम् ॥ ऋ० १।१।३

१९४. अक्षैर्मा दीव्यः कृषिमित्कृषस्व वित्ते रमस्व बहु मन्यमानः ।
तत्र गावः कितव तत्र जाया तन्मे वि चष्टे सवितायमर्यः ॥
ऋ० १०।३४।१३

१९५. प्रति पन्थामपद्महि स्वस्तिगामनेहसम् ।
येन विश्वाः परि द्विषो वृणक्ति विन्दते वसु ॥ य० ४।२९

१९६. परऋणा सावीरध मत्कृतानि माहं ।
राजन्नन्य कृतेन भोजम् ॥ ऋ० २।२८।९

१९७. नाभिरहं रयीणां नाभिः समानानां भूयासम् । अथ० १६।४।१

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

पुण्य कमाई सदा करें हम, शान्ति स्वस्ति जिससे पावें

पुण्य कमाई सदा करें हम, धर्म न्याय को अपनावें।
लालच के हम पास न फटकें, शान्ति स्वस्ति जिससे पावें॥

श्रमसे, तपसे, जगकी रचना, श्रम करना कर्तव्य परम।
सत्य अहिंसा पथ पर चलकर, ही हम सुख सम्पति पावें॥

धन पैदा करने का साधन, सत्य न्याय ही रहे सदा।
अपनी बाहों के बल से ही, हम धन औ वैभव पावें॥

धर्मशील जो परम सुधर्मा, और अहिंसा-पथगामी।
धारण करने हेतु देव से, वे ही अतुलित धन पावें॥

परधन नहीं चाहिए हमको, कभी न उसका लोभ करें।
श्रमपूरित कर्मों द्वारा ही, हम सुखमय जीवन पावें॥

ऋण के बन्धन से हे प्रभुवर, हमें मुक्त रख सदा यहाँ।
स्वयं कमाई सदा करें हम, नहीं पराश्रित कहलावें॥

हम सबमें तू भर दे इतना, बल-पौरुष उत्साह प्रभो।
अपने श्रम से खूब कमा कर, सबसे हम आदर पावें॥

धन है प्रभु का, नहीं हमारा, कभी न हम इसको भूलें।
उसे दान में रहें लुटाते, दुःखियों को देकर खावें॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

त्यक्तेन भुंजीथाः

१९८. रयिं दानाय चोदय । अथ० ३।२०।५

१९९. मा गृधः कस्यस्विद् धनम् । य० ४०।१

२००. तेन त्यक्तेन भुंजीथाः । य० ४०।१

२०१. य आध्राय चकमानाय पित्वोऽन्नवान्त्सन् रफितायोप जग्मुषे ।
स्थिरं मनः कृणुते सेवते पुरोतो चित्स मर्डितारं न विन्दते ॥
ऋ० १०।११७।२

२०२. विश्वेषामदितिर्यज्ञियानाम् विश्वेषामतिथिर्मानुषाणाम् ।
ऋ० ४।१।२०

२०३. प्रेष्ठं वो अतिथिं स्तुषे मित्रमिव प्रियम् । ऋ० ८।४।११

२०४. प्रजाभ्यः पुष्टिं विभजन्त आसते । ऋ० २।१३।४

२०५. शतहस्त समाहर सहस्रहस्त सं किर ॥ अथ० ३।२४।५

२०६. प्र स क्षयं तिरते वि महीरिषो यो वो वराय दाशति ।
प्र प्रजाभिर्जायते धर्मणस्पर्यरिष्टः सर्व एधते ॥ ऋ० ८।२७।१६

२०७. तवोतिभिः सचमाना अरिष्टा बृहस्पते मघवानः सुवीराः ।
ये अश्वदा उत वा सन्ति गोदा ये वस्त्रदाः सुभगास्तेषु रायः ॥
ऋ० ५।४२।८

२०८. प्र णीयादिन्नाधमानाय तव्यान् द्राघीयांसमनु पश्येत पन्थाम् ।
आहि वर्तन्ते रथ्येव चक्रान्यमन्यमुप तिष्ठन्त रायः ॥
ऋ० १०।११७।५

२०९. दक्षिणावान् प्रथमो हूत एति दक्षिणावान् ग्रामणीरग्रमेति
तमेव मन्ये नृपतिं जनानां यः प्रथमो दक्षिणामाविवाय ॥
ऋ० १०।१०७।५

२१०. न भोजामम्रुर्नन्यर्थं मोयुर्न रिष्यन्ति न व्यथन्ते ह भोजाः ।
इदं यद्विश्वं भुवनं स्वश्चैतत् सर्वं दक्षिणैभ्यो ददाति ॥
ऋ० १०।१०७।८

२११. स इद्भोजो यो गृहवे ददात्यन्नकामाय चरते कृशाय ।
अरमस्मै भवति यामहूता उतापरीषु कृणुते सखायम् ॥
ऋ० १०।११७।३

२१२. मोघमन्नं विन्दते अप्रचेताः सत्यं ब्रवीमि वध इत्स तस्य ।
नार्यमणं पुष्यति नो सखायं केवलाघो भवति केवलादी ॥
ऋ० १०।११७।६

२१३. अदित्सन्तं चिदाघृणे पूषन्दानाय चोदय । ऋ० ६।५३।३

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अर्पित कर दे तू समाज को, जो तू प्रभु से पाता है

अर्पित कर दे तू समाज को, जो तू प्रभु से पाता है।
जो खाता है बिना खिलाये, नहीं प्रभू को भाता है॥

देवों में ज्यों पूज्य अदिति माँ, वैसे ही हैं अतिथि हमें।
उन्हें खिलाकर खाने का, आदेश वेद में आता है॥

क्यों लालच करता तू धन का, घोर स्वार्थ में माता है।
प्रभु से मिली हुई सम्पति क्यों, बिन बाँटे तू खाता है?

सौ हाथों से खूब कमा तू, लुटा हजारों हाथों से।
पायेगा अक्षय प्रसाद, क्यों, मन में चिन्ता लाता है?

साधन अपने हैं जितने भी, सभी लगा जन-सेवा में।
करता जो कल्याण विश्व का, वही अमर हो जाता है॥

भाग्यवान है जो भूखों को, भोजन भूरि खिलाता है।
मुक्त हस्त से जो दुखियों को, धन औ अन्न लुटाता है॥

भूखे को जो अन्न बाँटता, दुर्बल को देता जो दान।
धन्य उसी का जीवन जग में, सब को मित्र बनाता है॥

सच्चा पालक वही व्यक्ति है, उसका धन बढ़ता जाता।
कोई नहीं जिन्हें अपनाता, उनको जो अपनाता है॥

अन्न वस्त्र धन होने पर भी, जो कठोर बन जाता है।
उस पर प्रभु की कृपा न होगी, वह 'पापी' कहलाता है॥

दान प्रेरणा भर दे उसमें, यही प्रार्थना है प्रभु से।
परम कृपण भी प्रभु इच्छा से, अति दयालु बन जाता है॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

संगच्छध्वं सं वदध्वम्

२१४ उद्बुध्यध्वं समनसः सखायः । ऋ० १०।१०१।१

२१५. संगच्छध्वं सं वदध्वं सं वो मनांसि जानताम् । ऋ० १०।१९१।२

२१६. समानो मंत्रः समितिः समानी ।
समानं मनः सह चित्तमेषाम् ॥ ऋ० १०।१९१।३

२१७. समानी व आकूतिः समाना हृदयानि वः ।
समानमस्तु वो मनो यथा वः सुसहासति ॥ ऋ० १०।१९१।४

२१८. सं जानामहै मनसा सं चिकित्वा ।
मा युष्महि मनसा दैव्येन ॥ अथ० ७।५२।२

२१९. संज्ञानं न स्वेभिः संज्ञानमरणेभिः ।
संज्ञानमश्विना युवमिहास्मासु नि यच्छतम् ॥ अथ० ७।५२।१

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

संग चलें हम, संग रहें हम, संग करें सब काम

संग चले हम, संग रहें हम, संग करें सब काम।
एक लक्ष्य हो, एक मंत्र हो, एक समिति हो, एक मुकाम॥

सभा समिति में मिलकर बैठें, मिलकर सोचें बात।
एक चित्त हो, एक हृदय हो, कर डालें सब काम॥

निश्चय औ संकल्प एक हो, मन हो सबका एक।
मीठा हो व्यवहार सभी का, मीठे सारे काम॥

मन्त्र और मन्त्रणा एक हो, मतभेदों का नाम न हो।
सब के हित की बात सोचना, यही हमारा काम॥

स्वार्थ जहाँ छाया रहता है, विघटन को बल देता है।
स्वार्थ-शून्य हो चलें, करें हम, शोभनीय सब काम॥

दिव्य पुकार उठे जो उर में, उसका स्वागत करें सदा।
कृपा अनुग्रह से अश्विनि के, पूरे हों सब काम॥

सामंजस औ सौमनस्य का, व्रत लेकर हम चलें सदा।
अपने और पराये-सबके, बनें मित्र निष्काम॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

पुमान्पुमान्सं परि पातु विश्वतः

२२०. याभिः शचीभिर्वृषणा परावृजम्
प्रान्धं श्रोणं चक्षस एतवे कृथः।
याभिर्वर्तिकां ग्रसिताम मुंचतं ताभिरूषु
ऊतिभिरश्विना गतम् ॥
ऋ० १।११२।८

२२१. पुमान्पुमान्सं परि पातु विश्वतः। य० २९।५१

२२२. द्वेषोयुतो न दुरिता तुर्याम मर्त्यानाम्। ऋ० ५।९।६

२२३. भिषज्यतं यदातुरम्। ऋ० ८।२२।१०

२२४. यथा शमसद् द्विपदे चतुष्पदे।
विश्वं पुष्टं ग्रामे अस्मिन्ननातुरम् ॥ ऋ० १।११४।१

२२५. त्वं विष्णो सुमतिं विश्वजन्याम्।
अप्रयुतामेवयावो मतिं दाः ॥ ऋ० ७।१००।२

२२६. आरे देवा द्वेषो अस्मद्युयोतनोरु णः शर्म यच्छता स्वस्तये।
ऋ० १०।६३।१२

२२७. अस्मे ता त इन्द्र सन्तु सत्याऽहिंसन्तीरुपस्पृशः।
ऋ० १०।२२।१३

२२८. त्वामग्ने पुष्करादध्यथर्वा निरमन्थत। साम० पू०, ९

२२९. प्र प्र क्षयाय पन्यसे जनाय जुष्टो अद्रुहे। ऋ० ९।९।२

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मनुज मात्र की सेवा कर हम, जगती का कल्याण करें

मनुज मात्र की सेवा कर हम, जगती का कल्याण करें।
जन-समाज के दुःखों का हम, यथाशक्ति अवसान करें॥

मानव जन्म इसलिए पाया, सेवा का कर्तव्य करें।
अपने सभी साधनों द्वारा, जनहित का हम काम करें॥

जो अपंग हों, दीन-दुःखी हों, उनको हम भाई मानें।
जैसे भी सम्भव हो. उनका, भली भाँति उपकार करें॥

सेवा, रक्षा औ सहायता, हर प्राणी की करनी है।
यदि कोई रोगी हो, तो हम, जा उसका उपचार करें॥

ग्राम नगर-वासी सब प्राणी, स्वस्थ रहें, सानंद रहें।
पशु पक्षी भी हृष्ट पुष्ट हों, प्रभु सबका कल्याण करें॥

जितने भी हों कर्म हमारे, भरे अहिंसा से होवें।
हो कल्याण विश्व का उनसे, ऐसी प्रभुवर कृपा करें॥

द्वेषमुक्त कर दें प्रभु हमको, यही प्रार्थना है उनसे।
दें सद्‌बुद्धि हमें वे ऐसी, हम जगका कल्याण करें॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

भिन्धि विश्वा अप द्विषः

२३०. नकिर्देवा मिनीमसि नकिरायोपयामसि। ऋ० १०।१३४।७

२३१ अद्या मुरीय यदि यातुधानो अस्मि।
यदि वायुस्ततप पूरुषस्य ॥ अथ० ८।४।१५

२३२. मा कस्य नो अररुषो धूर्तिः प्रणङ् मर्त्यस्य। ऋ० ७।९४।८

२३३. मो अहं द्विषते रधम्। ऋ० १।५०।१३

२३४. मा नो वधाय हत्नवे जिहीळानस्य रीरधः।
मा हृणानस्य मन्यवे ॥ ऋ० १।२५।२

२३५. अनमित्रं नो अधरादनमित्रं न उत्तरात्।
इन्द्रानमित्रं नः पश्चादनमित्रं पुरस्कृधि ॥ अथ० ६।४०।३

२३६. भिन्धि विश्वा अप द्विषः। साम०पू०, १३४

२३७. युयोध्यस्मद् द्वेषांसि। ऋ० २।६।४

२३८. विश्वाद्वेषांसि प्र मुमुग्ध्यस्मत्। ऋ० ४।१।४

२३९. स सुत्रामा स्ववाँ इन्द्रो अस्मे।
आराचित् द्वेषः सनुतर्युयोतु ॥ ऋ० ६।४७।१३

२४०. विश्वा अप द्विषो जहि। ऋ० ९।१३।८

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

द्वेषमुक्त कर दो प्रभु हमको, हम न परस्पर वैर करें

क्यों हिंसा हम करें किसी की? क्यों अशान्ति को फैलावें ?
देव-कृपा से इस जीवन में, सबकी सेवा कर जावें ।।

करें दुखी हम किसी जन्तु को, या हम पीड़ा पहुंचावें।
ऐसा जीवन जीने से तो, अच्छा है, हम मर जावें ।।

नहीं बुरा हम सोचें उनका, दुष्ट और जो द्वेषी हैं।
नहीं मारना है उनको भी, हमें मारने जो आवें ।।

अपमानित करते जो हमको, ना-समझी में पड़े हुए।
उनको पीड़ा देने को हम, उत्सुक कभी न हो जावें ।।

जो लज्जित होते हैं खुद ही, अपनी करनी को लेकर।
उन्हें दण्ड देने की इच्छा, कभी न हम मन में लावें ।।

वातावरण बना दो ऐसा, इन्द्रदेव तुम कृपा करो।
जिधर दृष्टि हम डालें, सबको, निर्वैरी ही हम पावें ।।

द्वेषमुक्त कर दो प्रभु हमको, नहीं किसी से वैर करें।
सभी तरह के द्वेषों से हम, मुक्ति यहीं पर पा जावें ।।

द्वेषभाव यदि कभी हमारे, मन में आकर टिक जावे।
देव-कृपा से तुरत उसे हम, धू-धू कर जलता पावें ।।

वैर-द्वेषमय कर्म न कोई, कभी करें हम जीवन में।
पूर्ण अहिंसामय जीवन हो, निर्विकार हम बन जावें ।।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अभयं मित्रात् अभयं अमित्रात्

२४१. यतोयतः समीहसे ततो नो अभयं कुरु।
शं नः कुरु प्रजाभ्योऽभयं नः पशुभ्यः ।। य० ३६।२२

२४२. इदमुच्छ्रेयोऽवसानमागां शिवे
मे द्यावा पृथिवी अभूताम्।
असपत्नाः प्र दिशो मे भवन्तु
न वै त्वा द्विष्मो अभयं नो अस्तु ।। अथ० १९।१४।१

२४३. मा नो मर्ता अभिद्रुहन्। ऋ० १।५।१०

२४४. अभयं मित्रादभयममित्रादभयं ज्ञातादभयं पुरो यः।
अभयं नक्तमभयं दिवा नः सर्वा आशा मम मित्रं भवन्तु ।।
अथ० १९।१५।६

२४५. उत नः सुभगान् अरिः वोचेयुर्दस्म कृष्टयः। ऋ० १।४।६

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

शत्रु हमारे मित्र बनें, हम सबसे निर्भय हो जावें

निर्भय कर दे हमें देव तू, जहाँ कहीं भी हम जावें।
शत्रु हमारे मित्र बनें, हम सबसे निर्भय हो जावें॥

द्वेष-मुक्त मानस हो अपना, सविता धरती कृपा करे।
दसों दिशाएँ हम सबके प्रति, वैर-शून्य ही बन जावें॥

अद्वेषी मानस होनेसे, हमें, अभय है चारों ओर।
पशुप्राणी औ प्रजा हमारी, सभी हमें सुख पहुचावें॥

मानवजाया कभी न कोई, हमसे राखे द्वेष कभी।
शत्रु हमारी करें प्रशंसा, मित्र हमारे बन जावें॥

मित्रोंसे तो सब लोगोंको, रहता ही है अभय सदा।
जो अमित्र हैं वे भी हमको, कभी नहीं भय पहुँचावें॥

ज्ञात और परिचित लोगोंसे, डर लगता है कभी नहीं।
सभी अपरिचित लोगोंसे भी, हम सब निर्भय बन जावें॥

रजनीमें भी रहे अभय, औ, दिनमें भी हो अभय सदा।
पूरब पश्चिम सभी दिशाएँ, मित्र हमारी बन जावें॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

शांतिः शांतिः शांतिः

२४६. शं मे अस्तु अभयं मे अस्तु । अथ० १९।९।१३

२४७. शं च नो मयश्च नो मा चनः किं चनाममत् ।
क्षमा रपो विश्वं नो अस्तु भेषजं सर्वं नो अस्तु भेषजम् ॥
अथ० ६।५७।३

२४८. शं नः करत्यर्वते सुगं मेषाय मेष्ये ।
नृभ्यो नारिभ्यो गवे ॥ ऋ० १।४३।६

२४९. शं नो देवः सविता त्रायमाणः शं नो भवन्तूषसो विभातीः ।
शं नः पर्जन्यो भवतु प्रजाभ्यः शं नः क्षेत्रस्यपतिरस्तु शंभुः ॥
ऋ० ७।३५।१०

२५०. शान्ता द्यौः शान्ता पृथिवी शान्तमिदमुर्वऽन्तरिक्षम् ।
शान्ता उदन्वतीरापः शान्ता नः सन्त्वोषधीः ॥
अथ० १९।९।१

२५१. पृथिवी शान्तिरन्तरिक्षं शान्तिर्द्यौशान्तिरापः ।
शान्तिरोषधयः शान्तिर्वनस्पतयः
शान्तिर्विश्वे मे देवाःशान्तिः सर्वे मे देवाः ॥
शान्तिः शान्तिः शान्तिः अथ० १९।९।१४

ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सबका हो कल्याण जगतमें, शान्ति सभी प्राणी पावें

सबका हो कल्याण जगतमें, शान्ति सभी प्राणी पावें ।
भयका रहे न नाम कहीं भी, हम सब निर्भय बन जावें ।।

पाप हमारे सभी क्षमा हों, करे न दुःख पीड़ित कोई ।
रहें स्वस्थ निर्भय सब प्राणी, जगको भयनाशक पावें ।।

नर नारी गौएँ घोड़े औ, मेढ़ा मेढ़ी आदि सभी ।
रुद्रदेव इन सब जीवोंपर, कृपा-अनुग्रह बरसावें ।।

रवि पर्जन्य उषा सवकी हो, कृपादृष्टि हमपर सुखदा ।
डाल दयाकी दृष्टि क्षेत्रपति, प्रचुर धान्य दें, हरषावें ।।

पृथ्वीमाता अन्तरिक्ष औ, जल औषधि वृक्षादि सभी ।
विश्वदेव हों सभी शान्त, हम सबसे ही शान्ती पावें ।।

सबको हो आनन्द जगतमें, सब प्राणी शान्ती पावें ।
सभी प्राणियोंको सुखमय लख, हम भी सुखशांती पावें ।।

शान्ता हो द्यौ, शान्ता पृथिवी, अन्तरिक्ष भी शान्त रहे ।
शांति, शांति हो, शांति चतुर्दिक, सभी जीव शांती पावें ।।

ॐ शान्तिः
शान्तिः
शान्तिः

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

वेदामृत : चुने हुए मंत्रोंका अर्थ

ॐ

१. जो आकाशकी भाँति व्यापक है, ब्रह्म है, गुण, कर्म और स्वरूपमें सबसे अधिक है, सबका रक्षक है, उसका नाम है—ॐ।

२. वह उत्तम व्यापक परमेश्वर वेदकी ऋचाओंमें अक्षर—ॐ रूपमें विराजमान है।

३. अग्नि रूपमें स्वयं-प्रकाशित परमेश्वरकी हम वंदना करते हैं।

४. ऋतम्—ज्ञानमय सत्य और सत्यम्—व्यवहारमय सत्यका जन्म महान तपस्यासे हुआ है।

५. अदिति माता हमें द्वेषसे परे ले जाय।

कैसा सुन्दर काव्य प्रभूका, मोद और आनन्द भरा

६. पर्वतोंकी गुफाओंके निकट, नदियोंके तटपर, उनके संगमपर, समुद्रके किनारे बुद्धिमान ज्ञानी विप्र जन्म लेते हैं, लिये हैं।

७. देखो और समझो प्रभुका यह काव्य, जो न कभी मरता है और न कभी जीर्ण होता है।

८. इस महान अरण्यमें कोई जन्तु बैलके-से स्वरमें बोलता है, कोई चींचीं करके मानों उसका उत्तर देता है। ऐसा लगता है, मानों ये जन्तु बार-बार वीणा-वादन द्वारा वन देवीका यशोगान कर रहे हैं।

९. वनमें कहीं गौएँ चर रही हैं। कहीं लता-गुल्मोंके भव्य भवन बने हैं। सायंकालमें चारा लकड़ी ले जानेवाले शकटोंकी-सी चर्‌र-मर्‌र ध्वनि सुनाई पड़ती है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

१०. हरिणोंकी मातृरूपिणी वन देवीका सौरभ मृगनाभिकी भांति चारों ओर सुगन्ध फैला रहा है। वनमें अनेक खाद्य पदार्थ भी उपलब्ध हैं, जिससे कृषिका अभाव नहीं खलता, हम अरण्यानी देवीकी वंदना करते हैं।

११. उषा सुन्दरी युवतीकी भांति सबको आनन्दित करती हुई आती है। सारे प्राणि-जगतको वह जगाती है। मनुष्योंको वह अपने-अपने कामपर भेजती है और पक्षियोंको वह गगनविहारी बननेकी प्रेरणा देती है।

१२. हे विभावरि, हे प्रकाशमयी सुन्दरी उषे, सारे प्राणियोंका प्राण और जीवन तुझमें ही बसता है। बड़े रथपर बैठी उषे, तू विचित्र धनवाली है। तू हमारी पुकार सुन।

१३. श्वेत-वसना उषा और कृष्ण-वसना रजनीके बीचमें है प्रकाशमान सूर्य, जिसे मानों दुलराती हुई दो माताएँ एक दूसरीकी ओर उछाल रही हैं। रात्रि ऊषाकी ओर, ऊषा रात्रिकी ओर।

१४. सारा विश्व, समस्त प्राणिजगत उषा सुन्दरीके दर्शनके लिए लालायित रहता है। वह उसे प्रणाम करता है। उषा प्रकाशकी निर्मातृ है और अपार वैभव-सम्पन्ना है। दिवः—आकाशकी यह बेटी हमसे द्वेष करनेवालोंको हमसे दूर करे।

किस देवाका करूं मैं अर्चन, तुझे छोड़कर परम प्रभो?

१५. हे सोमदेव, तुमने इन सारी औषधियोंको, जलको, इन्द्रियों-को, दिशाओंको, अन्तरिक्षको जन्म दिया है। तुम्हीं सबका विस्तार करते हो और अन्धकारको दूर भगाते हो।

१६. हे शतक्रतो परमेश्वर, वेदपाठी, गायत्रीके भक्त और साम गानों-से वेदकी ऋचाओंके नित्य अभ्यासी वेद-मंत्रों द्वारा सतत तेरी अर्चना करते रहते हैं।

१७. जब संसारकी रचना नहीं हुई थी, तब भी वह परमेश्वर विद्यमान था। उसीने संसारके स्वर्णमय उपादान कारणको अपने

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

गर्भमें धारण किया। वही पंचभूतोंका स्वामी बना। उसीने पृथ्वी और द्युलोकको धारण किया और उन्हें अपने स्थानपर स्थिर किया, उस प्रजापति परमेश्वरको छोड़कर हम अन्य किसकी अर्चना करें ?

१८. उस परमेश्वरने ही सबको जीवन दिया है, बल दिया है। सभी उसकी आज्ञाका पालन करते हैं। उसकी छाया अमृत जैसा सुख देती है। मृत्यु भी उसीके अधीन है। उस सुखदायी परमेश्वरको छोड़कर हम अन्य किसकी अर्चना करें ?

१९. जो प्राणधारी सारे जीव-जगतका अद्वितीय स्वामी है, जो मानव और पशु सभीका ईश है, उस परमेश्वरको छोड़कर हम अन्य किसकी अर्चना करें ?

२०. परमेश्वर जगतका स्वामी है, नाथ है, सर्वज्ञ है, ज्ञानका उत्पादक है और प्रकाशका स्वरूप है। संसारकी सारी वस्तुएँ— पर्वत, नदियां आदि उसकी सुन्दर महिमाको प्रकट करनेवाली पताकाएँ हैं।

२१. हे प्रभु, तू दिव्य गुणधारी, अद्भुत और सर्वश्रेष्ठ मित्र, वरुण, अग्नि आदिको ज्ञान देनेवाला है। द्यु, पृथ्वी, अन्तरिक्ष तथा सूर्यका आधार है। तू ही चर और अचर, स्थावर और जंगम—सभीकी आत्मा है।

२२. जिस महान विराट परम ब्रह्मके नेत्र सूर्य और चन्द्रमा हैं, अग्नि जिसका मुख है, उस परमेश्वरको हमारा श्रद्धापूर्ण प्रणाम है।

२३. हे प्रभो, तू हमें उसी लोकमें ले चल, जहाँ मोद और आनन्द ही आनन्द भरा है और जहांपर सभी कामनाओंकी पूर्ति हो जाती है। हमें तू उसी अमृत-मोक्ष सुखका भागी बना।

सब नामोंमें सब रूपोंमें, बसता है प्रभु एक तुही

२४. सारे जगतका रचयिता परमेश्वर कारण, सूक्ष्म और स्थूल शरीरोंसे रहित है, नस-नाड़ीके बन्धनोंसे मुक्त है। वह पवित्र है,

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

त्रिकालदर्शी कवि है, मनीषी है, सर्वव्यापी है, स्वयंभू है। अनादिकालसे जीवको गढ़ता आया है, प्रकाशित करता है, ज्ञान देता है।

२५. परमेश्वर निष्काम है, धीर है, अमर है, स्वयंभू है, अनादि है। वह रससे तृप्त है, आनन्दमय है। पूर्ण है, परिपूर्ण है। जो उस परमेश्वरको जान लेते हैं, उन्हें जन्म मृत्युका भय नहीं रहता।

२६. परमेश्वर पुरुष रूप है। उसके अनन्त शीश हैं, अनन्त नेत्र और अनन्त पग हैं। वह भूमिको—सारे ब्रह्मांण्डोंको चारों ओरसे पूर रहा है, फिर भी वह इससे दश अंगुल ऊपर है। वह हमारी दर्शन और परिगणनकी सीमासे परे है।

२७. वह परमेश्वर अनन्त चक्षुओंसे देखता है, अनन्त मुखोंसे बोलता है। वह अनन्त भुजाओंसे, अनन्त बल-पराक्रमसे युक्त है। वह सर्वव्यापी है, एक है, अद्वितीय है और स्वयं प्रकाशस्वरूप है। वह सूर्य और पृथ्वी लोकको कार्यरूपमें प्रकट करता है और अनन्त बल-पराक्रम द्वारा सबको धारण करता है।

२८. हे परमेश्वर, तू सबसे बड़ा है, तू सूर्यको प्रकाश देता है। तू विश्वकर्मा है, विश्वदेव है, सबका देव है, महान है।

२९. ज्ञानी लोग एकमात्र सत्ताधारी परमेश्वरको अनेक नामोंसे पुकारते हैं। जैसे, इन्द्र, मित्र, वरुण, अग्नि। दिव्य गरुत्मान सुपर्ण भी वही है। वही यम है, वही मातरिश्वान है।

३०. वह सच्चिदानन्द परमेश्वर ही अग्नि है, वही वायु है। वही चन्द्रमा है, शुक्र है, ब्रह्म है। वह सर्वव्यापी है, जल है। वही प्रजापति है।

३१. परमेश्वरने नाना रूप धारण कर रखे हैं। यत्र-तत्र-सर्वत्र हमें उसीके दर्शन होते हैं।

३२. तत्वदर्शी लोग परमेश्वरको, एक होते हुए भी नाना रूपों-में कल्पित करते हैं।

३३. हे प्रभो, तेरे सभी नाम आदरणीय हैं, सभी वन्दनीय हैं।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

तू ही माता, तु ही पिता है, बन्धु सखा है प्रभो तुही !

३४. हे परमेश्वर, तू हमारा रह और हम तेरे रहें।

३५. परमेश्वर हम सबका बन्धु है, भाई है, जन्मदाता है। वह सारे भुवनोंको, सारे धर्मोंको जानता है।

३६. हे अग्ने, तू हमें पिताकी भाँति उत्तम ज्ञान दे, जिससे ह में सब सुख मिले और हमारा कल्याण हो।

३७. हे परमेश्वर, तू हमारा पालक पिता, दयालु भ्राता, सुखद मित्र और प्राणदाता पुत्र हैं। नाना रूपोंसे तू अपने उपासकोंको लाभ पहुँचाता है।

३८. अग्नि रूप परमेश्वरको ही मैं सदा अपना पिता, अग्रणी, सखा, भ्राता और मित्र मानता हूँ।

३९. परमात्मा हमारा त्राता है। हम जो कुछ करते हैं, वह सब देखता है। वह सर्वव्यापी है, अन्तरात्मा है, सुखदाता है। वह हमारा मित्र है, पिता है, पितामह है। वही कर्ता है और जीवनदाता जगदीश्वर है। ऐसा हम जानें।

४०. हे शतक्रतु, परम सामर्थ्यवान परमेश्वर, तू ही हमारा पिता है, तू ही हमारी माता। तू ही हमें ठौर-ठिकाना देनेवाला है। तू हमें सुख प्रदान कर।

४१. अदिति ही द्यौ है, अन्तरिक्ष है। अदिति ही माता है, पिता है, पुत्र है। अदिति ही विश्वेदेवा है। अदिति ही पंचवर्णिक मानव वंश है। जो उत्पन्न हुआ है, वह अदिति ही है और जो उत्पन्न होगा, वह भी अदिति ही है।

४२. हे इन्द्र, हम तेरे उपासक तेरे ही हैं। हम तेरे पुत्र हैं, तेरे कृपापात्र हैं। तुझपर ही निर्भर रहकर हम जीते हैं। हे मघवन्, तुझसे अधिक सुखदाता और कौन है?

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

४३. परमेश्वर नंगेको वस्त्रसे ढंकता है। रोगीको चंगा करता है। अन्धेको दृष्टि देता है, जिससे वह सबको अच्छी तरह देखने लगता है। लंगड़ा व्यक्ति उसकी कृपासे चलने लगता है।

४४. मातृगर्भसे ही हमें परस्पर भाईचारेका, भ्रातृत्वका भाव मिला है दूसरोंके साथ मिल बाँटकर खानेका, साथ रहनेका गुण हमें अपने जन्म से ही मिला है।

प्रेम भाव भर दे प्रभु हममें, सबके प्यारे बन जावें

४५. यह सारा जड़-चेतन जगत चारों ओरसे ईश्वरसे ही आच्छादित है।

४६. सब कुछ तो मैं ही हूं। सबमें मैं ही हूं। तृणभक्षी पशु भी मैं ही हूं और अन्नभक्षी मनुष्य भी मैं ही हूं। विस्तृत हृदयाकाशमें रहनेवाला अन्तर्यामी ब्रह्म भी मैं ही हूं!

४७. जो मनुष्य सारे प्राणियोंको आत्मरूप देखता है और सब प्राणियोंमें आत्मदर्शन करता है, वह न तो किसी प्राणीसे और न किसी वस्तुसे घृणा करता है।

४८. सब प्राणियोंमें आत्मदर्शी व्यक्तिको न मोह होता है, न शोक।

४९. सारी प्रजाका मैं प्रिय बन जाऊं।

५०. सारे पशुओंका, सारे प्राणियोंका मैं प्रिय बन जाऊं।

५१. समान गुणवालोंका, समधर्मा लोगोंका मैं प्रिय बन जाऊं।

५२. हे प्रभु, तू मुझे ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र—सभीका प्रिय बना दे।

५३. जो लोग भोगोंमें, पापोंमें आसक्त हैं, उन्हें मैं अच्छा तो न मानूं, फिर भी मैं उनके प्रति प्रेम भाव बनाये रखूं।

५४. हे पृथ्वीमाता, मुझपर रहनेवाले सभी प्राणी मुझसे प्रेम करें। तू मेरी वाणीमें मधु घोल दे।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

५५. हे प्रभु, आप प्रकाशमान ज्ञानसे प्रकाशित हैं। आप हममें प्रेम भावका विस्तारकर हमारा कल्याण करें।

हिंसा करनी नहीं किसीकी, कोई भी हो प्राणी !

५६. संसारमें किसी मनुष्यकी हिंसा मत करो।

५७ मित्रो, किसीकी हिंसा मत करो। किसीको सताओ मत।

५८. हे अग्ने, शरीरसे पालनेयोग्य प्राणियोंकी हिंसा मत करो।

५९. हे अग्ने, घोड़ेकी हिंसा मत करो। दो पैरवाले पशुकी, मनुष्यकी हिंसा मत करो। जंगली पशुकी हिंसा मत करो। एक खुरवाले पशु, घोड़े आदिकी हिंसा मत करो।

६०. मरुतोंकी माता, सर्व कल्याणकारी वसुओंकी कन्या, आदित्यों-की बहन, अमृत-नाभिवाली निरपराध अवध्या गौका वध कभी मत करो।

६१. अदिति-स्वरूपा विविध पदार्थोंसे सुशोभित गौकी हिंसा मत करो।

६२. घी-दूधसे घर भर देनेवाली अदिति स्वरूपा गौ माताकी हिंसा मत करो।

सख्यभावको बढ़ा परस्पर सबको सुख पहुँचाना है

६३. हे मनुष्यो, तुम परस्पर सदैव मैत्री भाव रखो।

६४. सभी मित्र अपने मित्रोंको सुख पहुँचावें।

६५. मित्र अपने मित्रको अधर्माचरणसे सदैव विरत करके सुख पहुँचावें।

६६. हम ऐसे लोगोंको ही मित्र बनावें, जो उदार हो, अहिंसक हों और विवेकी हों।

६७. जो व्यक्ति अपने साथी, मित्र और सेवकको अन्न, धन आदि नहीं देता, वह सच्चा मित्र नहीं है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

६८. ऐसे व्यक्तिको कभी मित्र न बनावें, जो कटु-भाषी हो और जिसका वाणीपर संयम न रहता हो।

६९. जो मित्रको त्याग देता है, उसकी वाणी सफल नहीं होती।

७०. हे सर्वज्ञ प्रभु, जो सदा पाप करता है, सदैव दूसरोंका बुरा चेतता है, ऐसे अनिष्ट चिन्तकसे हमें बचाइये। ऐसे पर-द्रोहीके निकट हमें मत ले जाइये।

७१. हे पवित्रात्मा, पावित्र्य बढ़ानेवाले प्रभु, हम आपकी मैत्री चाहते हैं।

७२. सबका मित्र परमात्मा, हम मित्रोंको ऐश्वर्य प्रदान करे।

७३. हे प्रभु हमें निवास दो, मित्र दो।

मित्र दृष्टिसे देखूं सबको, शत्रु न कोई रह जाये !

७४. हे प्रभो, सब प्राणी मुझे मित्रकी दृष्टिसे देखें। मैं भी सारे प्राणियोंको मित्रकी दृष्टिसे देखूं। यों हम सभी परस्पर मित्र दृष्टिसे देखें।

७५. मुझे मित्रकी दृष्टिसे देखिये।

७६. मैं जिन प्राणियोंको देखता हूं और जिन प्राणियोंको नहीं देखता—अर्थात् प्रत्यक्ष और परोक्षमें रहनेवाले सभी प्राणियोंके प्रति मेरे मनमें प्रेम और सद्बुद्धि रहे।

७७. जलकी धारा जैसे एक स्थान छोड़कर अन्यत्र चली जाती है, वैसे ही हम द्वेषभाव छोड़कर मैत्री भावको प्राप्त हों।

७८. जिस किसीपर मेरी दृष्टि पड़े, वही मेरा प्यारा बन जाय।

७९. सारा संसार एक ही आश्रयमें रहे, जैसे अनेक पक्षी एक नीड़में बसते हैं।

८०. हे प्रभो, तेरी उन विभूतियोंको सभी जानते हैं, जो तूने मानव समाजपर बिखेरी हैं। तू सारे संसारको सुख-सम्पत्ति और कल्याणसे भर दे।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

- CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

८१. चारों ओरसे कल्याणकारी सद्विचारोंकी बाढ़ आकर हमें भर दे।

निर्विकार रहकर मन मेरा शिव-संकल्प करे

८२. जागतेमें और सोतेमें मेरा मन दूर-दूर भागा करता है, नाना भोगोंमें प्रवृत्त करता है। मेरा यह मन शुभ-संकल्प करनेवाला हो।

८३. मेरा मन ज्ञानका उत्पादक है, बुद्धिरूप है, स्मृतिका साधन है, अन्तःकरणमें आत्माका साथी है, नाशरहित है, ज्योति-स्वरूप है। मनके बिना कोई भी कर्म नहीं किया जाता। मेरा यह मन शुभ-संकल्प करनेवाला हो।

८४. चतुर सारथी जिस प्रकार घोड़ोंकी लगाम अपने हाथमें रखता है, उसी प्रकार मेरा मन मनुष्य आदि प्राणियोंको संयमपूर्वक इच्छानुकूल चलाता है। वह हृदयमें विराजमान है, सबका प्रेरक है। अत्यन्त वेगवान है। जरा-जीर्णतासे रहित है। मेरा यह मन शुभ-संकल्प करनेवाला हो।

८५. ऐ मेरे मनके पाप, तू मुझसे दूर हट जा। तू कैसी गंदी बातें करता है। दूर हट ! मैं तुझे नहीं चाहता।

८६. उल्लू, भेड़िये, कुत्ते, चकवा-चकवी, गरुड़ और गीध—सदैव काम-क्रोध-लोभ-मोह-मत्सर आदिकी दुर्वृत्तियोंसे घिरे रहते हैं। इन विकारोंको पत्थरपर रगड़-रगड़कर चूर कर दो हे इन्द्र देव, जिससे ये हमें प्रभावित न कर सकें।

८७. हे अग्नि देव, तू पापोंसे हमारी रक्षा कर। हिंसा-द्वेषके हमारे मलिन विचारोंको तू अपने महान तापसे भस्म कर दे।

८८. हे अग्ने, दीप्तिमान प्रभु, हमारी समृद्धिके लिए तू हमें

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सन्मार्गसे ले चल। तुझे सारे मार्ग ज्ञात हैं। तू हमें कुटिल मार्गसे बचाकर परम आनन्दमय मार्गकी ओर ले चल।

८९. हे वरुण, हम तेरी माता अदितिके लिए समर्पित होकर निष्पाप बनें और सभी बन्धनोंसे मुक्त हो जायं।

९०. प्रभु हमारी बुद्धिको उत्तम गुण, कर्म और स्वभावमें प्रेरित करें।

९१. तुम्हारी बुद्धि ऐश्वर्यको वढ़ानेवाली और अहिंसाप्रधान हो।

९२. हे प्रभु, हमारे मनको कल्याण मार्गमें प्रवृत्त कर।

९३. हे सारे जगतके उत्पादक प्रेरक देव तू हमारे सारे दुराचरणोंको दूर कर दे और सभी कल्याणकारी गुण हममें भर दे।

ऋतको जानो, सत पहचानो, ऋतधर्मा तुम बनो सभी

९४. ऋतके, सत्यके पथपर चलो।

९५. ऋतको, सत्य ब्रह्मको जानो और उसको धाराको पहचानो।

९६. हे ऋतपालक सत्यधर्मा लोगो, तुम अहिंसा रूप व्यवहारको प्राप्त हो।

९७. जलसे जिस प्रकार प्राणधारक अन्न आदिकी उत्पत्ति होती है, सुन्दर स्वस्थ शरीर और दीर्घायु प्राप्त होतो है, उसी प्रकार ऋतका पालन करनेसे, सत्यके आचरणसे ऐश्वर्य, विद्या, दीर्घ-जीवन प्राप्त होता है और सत्य ब्रह्मकी भी उपलब्धि होती है।

९८. परमेश्वर कहता है कि मैं सत्यस्वरूप हूं, गम्भीर हूं। जिस काव्यकी रचना हुई है, उससे मैं ज्ञान देनेवाला हूं।

९९. सरल और सत्यका आचरण करनेवाले व्यक्तिके लिए प्रभु कल्याणका मार्ग प्रशस्त करते हैं, जिससे वह ससारमें विजयी हो।

१००. सत्य वचन और असत्य वचनके बीच प्रतियोगिता चलती

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

है। सोमदेव सत्य-ऋजु-आर्जवकी रक्षा और असत्यका विनाश करते हैं।

१०१. सत्यकी नाव सत्यशीलको ऐश्वर्य देते हुए पार लगाती है।

१०२. भूमि सत्यपर और आदित्य ऋतपर प्रतिष्ठित है। सूर्यसे द्युलोक प्रभावित है, सोम द्युलोकमें आश्रित है।

१०३. सत्यकी प्राप्तिके लिए सत्यका व्रत लेना पड़ता है। व्रतसे दीक्षा मिलती है और दीक्षासे दक्षिणा। दक्षिणासे श्रद्धा मिलती है और श्रद्धासे सत्यकी प्राप्ति होती है।

१०४. हे व्रतपते अग्निदेव, मैं अनृतसे मुक्त होकर मन, वचन, कर्म द्वारा सत्यके आचरणका—व्रत लेनेका इच्छुक हूँ। आप मेरे इस व्रतको सिद्ध करनेकी कृपा करें।

१०५. देवो, तुम ऋत-परायण हो, ऋतसे उत्पन्न हो, ऋतकी वृद्धि करनेवाले हो और असन्मार्गके घोर विरोधी हो। हम सब—मानव और सूरी—तुम्हारी सुखद शरणमें रहें।

सदा कर्ममें निरत रहें हम, श्रमसे पैदा कर खावें

१०६. कर्म करते हुए ही सौ वर्षतक जीनेकी इच्छा करो।

१०७. हम सौ वर्षतक प्राण धारण करें, जीयें। हम सौ वर्षतक देखें, सुनें, बोलें और कभी दीन होकर न रहें। सदा स्वस्थ और सशक्त रहें। सौ ही क्यों, उससे भी अधिक वर्षोंतक स्वस्थ जीवनका आनन्द प्राप्त करें।

१०८. मेरी दोनों जंघाएं बलशाली रहें। घुटनोंमें वेग रहे। दोनों पैरोंमें दृढ़ता रहे। मेरे अंग सशक्त रहें। मेरी आत्मा अजेय रहे।

१०९. हे देव, हम कानोंसे कल्याणकारी वचन ही सुनें। आंखोंसे कल्याणकारी वस्तुएं ही देखें। हमारे सभी अंग पुष्ट और बलशाली हों। हमें सत्कार्योंके लिए पर्याप्त आयु मिले।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

११०. देवगण उत्तम क्रियाओंमें तत्पर कर्मशील व्यक्तियोंको हीं पसन्द करते हैं, आलसियोंको नहीं। तन्द्रा दूरकर जो निरालसी रहते हैं, वे ही परमानन्द प्राप्त करते हैं।

१११. पुरुषार्थी ही प्रार्थना करनेका उपयुक्त पात्र होता है। उसीकी प्रार्थना सुनी जाती है।

११२. मित्रो, वीर बनो और पार हो जाओ। पुरुषार्थी ही पार होते हैं।

११३. जागरण वैभव लाता है, आलस्य दारिद्र्य।

११४. देवकी, परमात्माकी मैत्री स्वयं परिश्रम किये बिना नहीं मिलती।

११५. मेरे दाहिने हाथमें पुरुषार्थ है और बांये हाथमें सफलता।

मधुमय जीवन रहे हमारा, सुख शांतीसे सदा भरा

११६. वायु तुम्हारे लिए मधुमती होकर बहे। समुद्र और नदियां तुमपर मधुकी वर्षा करें। सारी ओषधियां तुम्हारे लिए मधुमती बन जायं।

११७. रात्रि हमारे लिए मधुमती हो। उषा मधुमती हो। पृथ्वीका कण-कण हमारे लिए मधुमय हो। सूर्यकी कान्ति हमारे लिए मधुमती हो और वह पिताकी भांति हमारा पालन करे।

११८. सारी वनस्पति हमारे लिए मधुमती हो। सूर्य हमारे लिए मधुमान हों। सूर्यकी किरणें भी मधुमती हों।

११९. ओषधियां, जल, अन्न—सभी हमारे लिए मधुमान हों। क्षेत्रपति मधुमान हो। हम अहिंसक लोग उसके अनुकूल बरतें।

१२०. मेरा आना, मेरा जाना, मेरा आवागमन मधुमय हो।

१२१. मेरा प्रवास, मेरा परदेशगमन मधुमय हो। मेरा पुनरागमन भी मधुमय हो। हे अश्विनीकुमारो, तुम हमें कृपापूर्वक मधुसे सिक्त कर दो।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

१२२. हम जो स्वादिष्ट और मधुर जल ग्रहण कर रहे हैं, वह हमारा रक्षक सिद्ध हो।

१२३. मेरा अन्न मेरे लिए कल्याणकारी और मधुर हो।

१२४. हे अन्नदेव, आप हमें सुख देनेवाले हमारे प्रेमी मित्र हैं। आपसे हमारा कोई भेद नहीं। आप हमारे स्वास्थ्यदाता हैं। हमारा कल्याण करनेवाले हैं।

१२५. हे जलदेव, आप हमारी तृषा शान्त करनेवाले हैं। हमें सुख देनेवाले हैं। आपसे हम सुख और ज्ञान प्राप्त करें।

१२६. हे जलदेव, आप हमारे शरीरपर लगा हुआ मल धो दें। हममें तमोगुण, वैर, द्रोह, क्रोध आदि मानसिक मल लगे हों, उन्हें भी धोकर स्वच्छ कर दें। असत्य बोलकर हमने अपनी वाणी मलिन की हो तो उसे भी आप स्वच्छ कर दें।

१२७. हे प्रकाशके देवताओ अश्विनीकुमारो, तुम मधुके छत्तेमें भरी हुई मिठाससे मुझे भर दो, जिसमें लोगोंके बीच मेरी वाणीकी मधुरिमा फैले।

वाणीमें मधु घोल, मनुआं मीठा मीठा बोल!

१२८. कड़वी बात मुंहसे मत निकालो।

१२९. ज्ञानी पुरुष जब भलीभांति छानबीनकर पवित्र वचन बोलते हैं तो मैत्री भाव बढ़ता है। ऐसी वाणी कल्याणकारिणी होती है। उससे समृद्धिका, लक्ष्मीका आगमन होता है।

१३०. सबका प्रिय बननेके लिए प्रियवादी बनना चाहिए।

१३१. हे अग्ने, तू हमें सत्यपूरित अहिंसक वाणी दे और नाना प्रकारकी सम्पत्ति भी प्रदान कर।

१३२. हे बृहस्पते, तू हमें ऐसी वाणी दे जो ज्ञानके प्रकाशसे

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

जगमगाती हो, सभी दोषोंसे रहित हो, किसीको भी पीड़ा देनेवाली न हो और इच्छा-शक्तिको सन्मार्गकी ओर ले जानेवाली हो।

१३३. मेरी जिह्वासे परम शक्तिशाली, कल्याणकारी शब्द ही निकलें।

१३४. मैं जो कुछ बोलूं, वह मधुसे मिश्रित हो।

१३५. मैं जो कुछ बोलूं, उसमें मधु भरा हो। मैं भी भीतर बाहर मधुमय ही रहूँ।

१३६. मैं मधु हूँ—मधु-सा मीठा। मधुसे भी अधिक मीठा, मुलहठीसे भी मीठा।

१३७. मेरी जिह्वाके सिरेपर मधु हो। जिह्वाके मूलमें भी मधु-का ही स्वाद हो।

१३८. हे इन्द्र, तू हमें मीठी वाणी दे, सौभाग्य और सम्पत्तिमय जीवन दे।

१३९. हे वाचस्पति, तू मेरी वाणीको मीठी, चिकनी और कोमल बना दे।

पति पत्नी हों एक प्राणतन, दूधमें जैसे पानी

१४०. हे विश्वेदेवा, हम दोनों—वर-वधूके मन, हृदय और प्राण जलकी भाँति एक दूसरेमें घुल-मिल जायें और वायुके समान मिलकर एक हो जायें। जगतके धाताकी भाँति हम एक दूसरेका धारण-पोषण करें। एक होकर हम एक दूसरेको सुनें, समझें और मिलकर रहें।

१४१. वर कहता है कि हे वधू, मैं सौभाग्यके लिए तेरा पाणिग्रहण करता हूँ। तू वृद्धावस्थातक मेरे साथ रह। जगन्नियन्ताने गृहस्थ-धर्म-का पालन करनेके लिए तुझको मुझे सौंपा है।

१४२. तुम दोनों—वर वधू—प्रेमरज्जुसे बँधे हुए प्रभूको प्राप्त हो।

१४३. एक जुएँके दो बैलोंकी भाँति पति और पत्नी वृद्धावस्था-

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

तक प्रेमसे हिल-मिलकर, एक मन-प्राण होकर रहें। परस्पर प्रेमपूर्वक बातें करें। कभी विलग न हों।

१४४. हे पत्नी, तू मुझे ऊँख जैसी रसभरी मिली है। तेरे साथ रहनेसे मेरा सारा वैर-भाव निकल जायगा। तू कभी मुझसे विलग न हो।

१४५. हे दम्पति, तुम दोनों इस गृहस्थ-आश्रममें ही रहो। कभी विलग न हो। पूरी आयु भोगो और अपने गृहमें सुख-पूर्वक पुत्र-पौत्रों-के साथ आनन्द-क्रीड़ा करते हुए जीओ।

१४६. हे दम्पति, तुम दोनोंका जीवन सुख, आनन्द और हास्यसे सदा भरा रहे। तुम अपने घरमें आनन्द-पूर्वक दीर्घजीवन बिताओ। बाल-बच्चोंसे और उत्तम चौपायोंसे तुम्हारा घर भरा रहे। तुम्हारे जीवनका हर प्रभात आनन्दसे जगमगाता रहे।

१४७. प्रजापति परमेश्वर वर-वधूको वृद्धावस्थातक अलंकृत रखे, सन्तान दे और दोनोंमें प्रेम बनाये रखे। यह सुमंगली वधू पतिगृहमें प्रवेशकर पतिका सदा साथ देती रहे। हमारे घरके सभी प्राणियोंके लिए—सभी मनुष्यों और पशु-पक्षियोंके लिए यह वधू कल्याण-रूपा हो।

१४८. हम लोग सूर्य और चन्द्रमाकी भाँति कल्याण मार्गका, स्वस्ति मार्गका अनुगमन करें।

रानी बहू, स्वर्ग कर घरको, प्रेमप्यारसे भर दे !

१४९. हे गृहपत्नी, तू अपने गृहको प्राप्त हो। तू अपने गृहकी स्वामिनी होकर रह। तू सबको अपने वशमें रखकर चल। सब तेरी बात मानें।

१५०. घरको समृद्ध करनेवाली, पतिको सुख देनेवाली और सास-ससुरको सेवा, सुख और आनन्द देनेवाली, हे सुमंगली वधू, तू इस घरमें प्रवेशकर सबका कल्याण कर।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

१५१. हे वधू, तू शतायु हो, दीर्घजीवी हो। तू सदैव सावधान रह। विवेकपूर्ण रह। इस गृहमें प्रवेशकर गृहपत्नी बन। सविता तुझे दीर्घायु करें।

१५२. यह वधू सुमंगली है; सुलक्षणा है। सब लोग आकर इसे देखें और इसे अपना आशीर्वाद देकर जायँ।

१५३. हम वधू और उसके घरको मित्र-दृष्टिसे देखते हैं। भगवान सविता इसे पतिकुलवालोंके लिए मंगलमय बना दें।

१५४. शील और स्नेह भरे नेत्रोंवाली, पतिको सुख देनेवाली यह वधू पशुओंके लिए भी कल्याणकारी हो। यह शक्तिमती, वीर-प्रसवा सदा प्रसन्न रहे। घरमें देवर आदिके प्रति यह सद्भाव बरते। यह हमारे घरके सभी प्राणियोंके लिए—सभी स्त्री-पुरुषों, पशु-चौपायोंके लिए कल्याणकारिणी हो।

१५५. यह वधू सास-ससुरकी दुलारी बहू हो, देवर-ननदोंकी प्यारी भाभी हो। घरमें सब इससे प्रेम करें, इसका आदर करें। सब इसके साथ घरकी रानी जैसा व्यवहार करें।

१५६. हे वधू, तू अपने सास-ससुरको, पतिको, पतिके घरवालोंको सुख देनेवाली हो। तू हम सबको, सारी प्रजाको सुख दे और हमारा पोषण कर।

१५७. हे वरुण, हे बृहस्पते, हे इन्द्र, हे सवितृ, यह वधू अपने भाइयोंको, पतिको, चौपायोंको प्यार करनेवाली हो और सन्ततिको जन्म देनेवाली हो।

हो परिवार प्रेमसे पूरित, सदा रहे आनन्द भरा

१५८. प्रातःसे सायंतक परिवारमें सतत सौमनस्य रहना चाहिए।

१५९. तुम्हारा हृदय एक हो, मन एक हो। तुम्हारे भीतर वैर-

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

की भावना न रहे। तुम एक दूसरेको ऐसे प्रेमसे चाहो, जैसे गाय अपने हालके जाये बछड़ेको चाहती है।

१६०. पुत्र अपने पिताके अनुकूल होकर रहे। बेटा मांसे एक-मन होकर बरते। पत्नी पतिसे प्रेम भरी मीठी वाणी बोले।

१६१. भाई अपनी बहनसे द्वेष न करे। बहन अपनी बहनसे द्वेष न करे। सब लोग एक मत-वाले हों। समान व्रतवाले हों। सब लोग मीठी कल्याणकारी वाणा बोलें।

१६२. हे वधू, तू मंगल-दृष्टिवाली हो, पतिसे प्रेम करनेवाली हो। सबको सुखदायिनी हो। गृह-कार्यमें कुशल हो। सेवा-परायणा हो। उत्तम नियमोंवाली हो। वीरोंकी जन्मदातृ हो। देवरोंको स्नेह देनेवाली हो। तू सदा प्रसन्न रह। तेरे साथ-साथ हम भी प्रसन्न रहें।

१६३. एक-मन होकर हम लोग मित्रोंकी भाँति मिलकर रहें।

१६४. अतिथि सभी मनुष्योंका, सारी प्रजाका प्रिय होता है।

१६५. पवित्र करनेवाले जितेन्द्रिय, विद्वानके रूपमें हमारे घर पधारनेवाले अतिथि हमारा कल्याण करें।

१६६. अनेक रूप-रंगवाली, अनेक बछड़ोंकी माताएँ ये गौएँ हमारे लिए परम कल्याणदातृ हैं। वे हमारे गोष्ठोंमें निवास करें। वे बहुत दिनोंतक हमें दूध दें और हमारे मनोरथ सफल करें।

१६७. हमारे माता-पिताके लिए स्वस्ति हो, आनन्द हो।

धरती माता सुत हम तेरे, कृषि-कर्मा हम बनें सभी

१६८. हे पृथ्वी माते, तुझे शतशः प्रणाम है। कृषिके लिए हम तुझे स्वीकार करते हैं। अपनी रक्षाके लिए तुझे ग्रहण करते हैं। अपने ऐश्वर्यके लिए और माताकी भाँति तुझसे पोषण पानेके लिए हम तेरी वन्दना करते हैं।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

१६९. पृथ्वी मेरी माता है, मैं उसका पुत्र हूँ। पर्जन्यदेव हमारे पिता हैं। वे हमें समृद्धिसे भर दें।

१७०. जिस पृथ्वीपर खेती होती है, अन्न पैदा होता है, जो नदियोंसे भरी-पुरी है, सारे प्राणी जिसपर बसते हैं, चलते-फिरते-घूमते हैं, यह पृथ्वी हमपर अपनी उत्तमोत्तम विभूतियाँ बरसाये।

१७१. हे पृथ्वी, तुझपर सारी फसलें फूलती-फलती हैं। जौ, चावल, गेहूँ—सभी अन्न तुझसे पैदा होते है। पाँचों जातियोंके लोग तुझपर ही आश्रित रहते हैं। वर्षाका वरदान देनेवाले पर्जन्य देवक पत्नी, तुझे हमारे अनेक प्रणाम।

१७२. उत्तम अन्न देनेवाली कृषि करनेमें अपनी शक्ति लगाओ।

१७३. अपने मित्र क्षेत्रपतिकी कृपासे हम अन्न-धान्य प्राप्त करते हैं, जिससे हम सबका—हमारा, हमारी गायोंका, हमारे घोड़ों आदि चौपायोंका पोषण होता है। हमपर सदैव उसकी कृपा बनी रहे।

१७४. हे सत्यधर्मा पुरुष, तू अहिंसक है। तू हमारे लिए, हमारी ओरसे सम्पत्तिको धारण कर।

१७५. किसान लोग कृषिके उत्तम साधनों—हल, बैल, बीज आदि-के द्वारा उत्तम प्रकारसे खेत जोतकर अच्छी फसल काटें और सुखी हों।

१७६. हे कृषको, तुम्हें पयस्वती भूमि मिले। उसमें अच्छी तरह जोत-बोकर तुम पुष्टि करनेवाला अन्न खूब पैदा करो।

१७७. भूमि, कृषिके साधन, मेघ, कृषिकर्मा लोग—सभी सुखको प्राप्त हों। सब पर सुखकी वर्षा हो।

१७८. हे पृथ्वीमाते, तू हमारा कल्याण कर। हमपर आनन्द और समृद्धिकी वर्षा कर। हमें दैवी गुणोंसे सम्पन्न कर।

१७९. हे पृथ्वीमाते, तुझमें जो सुगन्ध है, वह जलमें और ओषधियों-

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

में प्रकट होती है, गंधर्व और अप्सराएं उससे लाभ उठाती हैं, उस सौरभसे तू हमें सुवासित कर दे। कोई भी व्यक्ति या प्राणी हमसे द्वेष न करे।

मंगलदातृ ओ गोमाता, जगमें तू प्रमोद भर दे

१८०. गौ आदि पशुओंके लिए आनन्द और सुख हो। मनुष्यमात्र-के लिए आनन्द हो। सबका कल्याण हो।

१८१. संसारकी भूख हम अन्न द्वारा मिटा सकते हैं, परन्तु कुमार्ग-की ओर ले जानेवाली कुबुद्धि तो गौके दूधसे ही मिटायी जा सकती है।

१८२. ओ भाग्यशाली सुन्दर धेनु, अवध्या गौ, तू तृण चरकर जीवित रहती है। तू हमें भी भाग्यशाली बना। तू घास चरती हुई निर्मल जलका पान कर।

१८३. कैसा मीठा पुष्टिदायक दूध गौ अपने वक्षमें संचित रखकर घूमा करती है। विश्वकी सारी मिठास मानो गौमें ही आ कर केन्द्रित हो गयी है। सभीके सुखमय पालन-पोषण और भोजनके लिए स्वयं परमेश्वरने ऐसा उत्तम विधान किया है।

१८४. हे गौओ, तुम दुर्बलको पुष्ट करके सबल बनाती हो और कुरूपको सुन्दर बनाती हो। हे मंगलध्वनि! तू हमारे घरका उत्कर्ष कर। हम सभाओंमें तेरी कीर्ति गाते हैं।

१८५. हमारी गौओंका नाश न हो। न तो चोर ही उन्हें चुरायें और न विरोधी जन उनपर प्रहार ही करें। गौओंके स्वामी दीर्घकाल-तक उन्हें अपने साथ रखकर देवार्चन करते रहें।

१८६. चितकबरी, पीली, धौली, श्यामा, रोहिणी आदि अनेक रंगोंवाली, बड़े बड़े बछड़ोंवाली, कभी विचलित न होनेवाली दुधार गौएं इस लोकके धारण और पोषणमें समर्थ होती हैं। ऐसी गौएं हमें

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मिलें। अपने दूधद्वारा इस लोककी पुष्टिके लिए सभी गौएँ निरापद होकर, निर्भय होकर विचरें।

१८७. हे गौओ, तुम सन्तानवती होओ। तुम सुन्दर घांस चरो और उत्तम सरोवर आदिमें निर्मल जल पीओ। तुम्हारा स्वामी न तो चोर हो, न दुष्ट हो। रुद्रदेव तुमपर प्रहार न करें।

१८८. हे अग्ने, सत्यके कारणभूत ऋतकी हम वंदना करते हैं। उसकी अर्चनाके लिए हमें गौओंसे नित्य दुग्ध मिलता रहे। गौएँ जब कच्ची आयुकी रहती हैं, तब भी उनके पास पक्व एवं मधुर दुग्ध रहता है। भले ही ये कृष्णवर्णा हों, उनका दुग्ध स्वच्छ, धवल, पौष्टिक और प्राणदाता होता है। वे अपने दुग्धसे मानव जातिको पुष्ट करती हैं।

पुण्य कमाई सदा करें हम, जिससे सुख शान्ती पावें

१८९. पुण्यकी कमाई ही टिकती और सुख देती है।

१९० पापकी कमाईपर हाथ न बढ़ाओ। उसे छोड़ दो।

१९१. परमेश्वरने श्रम और तपसे इस सृष्टिकी रचना की है। उसने सम्पत्तिको ऋतके आश्रित किया है। अर्थात् मनुष्य ऋतका, सत्यका पालन करते हुए ही धन-सम्पत्तिका उपार्जन करे।

१९२. मनुष्य ऋतके, सत्यके, न्यायके मार्गसे ही आदरपूर्वक सम्पत्तिका उपार्जन करें।

१९३. हम ईश्वरनिर्मित सात्विक एवं ईमानदारीके नियमोंके अनुसार सम्पति पैदा करें। आजीवन उचित रीतिसे धन कमावें। बेईमानीका धन सदा हमसे दूर रहे। ईमानकी कमाईसे शरीर पुष्ट होता है और मनुष्यका यश बढ़ता है।

१९४. ऐ जुआरी, तू पांसोंसे मत खेल। इसके बदले तू खेती कर। तू परिश्रमसे खेती कर और उसीकी कमाईसे सुख और आनन्द

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

प्राप्त कर। कृषिकी, श्रमकी कमाईसे तेरी गौएं सुखी रहेंगी, तेरी पत्नी प्रसन्न रहेगी और तुझे गृहस्थीका पूरा सुख मिलेगा।

१९५. हे प्रभो, हम पुरुषार्थी होकर उस अहिंसक और सुखदायी मार्गको प्राप्त करें, जिसके द्वारा सत्पुरुष दुःखदायी क्रियाओंको दूर करते हुए सुखदायी सम्पत्ति प्राप्त करते हैं।

१९६. हे प्रभो, तू हमारे द्वारा किये हुए सारे ऋणोंको पाट दे। तू ऐसा कर, जिससे हमें परायी कमाई न खानी पड़े। हम स्वयं अपने श्रमसे कमाकर खावें।

१९७. हे प्रभो, तू हमें ऐसा पुरुषार्थ दे कि हम अपने बाहुबलसे प्रचुर सम्पत्ति पैदा करें, जिससे समान श्रेणीके लोग हमारा आदर करें।

अर्पित कर दे तू समाजको, जो कुछ प्रभुसे पाया है

१९८. दानके लिए प्रेरित करनेमें ही सम्पत्तिका उपयोग है।

१९९. लालच मत करो। पराया धन, परायी वस्तु लेनेकी इच्छा कभी मत करो। सम्पत्ति तो सब प्रभुकी है।

२००. परमेश्वरने जो कुछ दिया है, उसे दूसरोंको बांटकर उसका उपभोग करो।

२०१. जो व्यक्ति भूखेको, दुःखीको, भोजनार्थीको नहीं देता, अन्न रहते हुए भी मनको कठोर बना लेता है, उससे पहले खा लेता है, वह व्यक्ति दयालु परमात्माको नहीं प्राप्त करता।

२०२. देवताओंमें जिस प्रकार माता अदिति पूज्य है, उसी प्रकार मनुष्योंमें अतिथि पूज्य है।

२०३. हमें प्रेमी उदार मित्रकी भांति अतिथिसे प्रेम करना चाहिए।

२०४. प्रभुसे मिले पुष्टिकारक अन्न और धनको जो आपसमें बांटकर खाते हैं, वे स्थिर रहते हैं।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

२०५. सौ हाथोंसे कमाओ, हजार हाथोंसे लुटाओ।

२०६. जो मनुष्य विश्वकल्याणके लिए सद्भावपूर्वक दान करता है, अपने साधन समर्पित करता है, वह अपना घर तो भरता ही है, उसकी महानताएं भी बढ़ती हैं और प्रजाकी भी अभिवृद्धि होती है। समाज भी निर्भय होकर फलता-फूलता है।

२०७. हे वृहस्पते, तेरे कृपापात्र निर्विघ्न रहते हैं। जो सम्पन्न और वीर लोग वस्त्रदान, गोदान, अश्वदान करते हैं, वे ही सच्चे सौभाग्यशाली हैं।

२०८. याचकको धन अवश्य देना चाहिए। दाताको बड़ा पुण्य मिलता है। लक्ष्मी चक्रकी भाँति सदा घूमती रहती है। किसी स्थान-पर स्थिर होकर नहीं बैठती।

२०९. जो व्यक्ति सबसे पहले दक्षिणा देता है, उसकी पुकार सबसे पहले होती है। वह सबसे अगला स्थान पाता है। वह ग्रामाध्यक्ष होता है। उसे राजा आदर देते हैं।

२१०. दाता अमर हो जाते हैं। ये न तो दरिद्र होते हैं, न कोई कष्ट या व्यथा ही पाते हैं। दक्षिणा देनेके कारण उन्हें इस लोकसे परलोकतककी सभी वस्तुएँ उपलब्ध हो जाती हैं।

२११. जो व्यक्ति अन्नार्थीको अन्न और दुर्बलको दान देता है, वही सच्चा पालनकर्ता है। उसे प्रचुर धन मिलता है और पराये लोग भी उसके अपने बन जाते हैं, मित्र बन जाते हैं।

२१२. जिसका चित्त उदार नहीं है, उसका अन्न और धन पाना व्यर्थ है। सचमुच उसका जीवन मृत तुल्य है। वह न तो ईश्वरको प्रसन्न करता है, न दानद्वारा मित्रको ही प्रसन्न और पुष्ट करता है। केवल अपने भोगोंकी पूर्ति करनेवाला पापरूप ही होता है।

२१३. हे प्रकाशमान पुष्टिकर्ता प्रभु, जो व्यक्ति दान नहीं करता, उसके हृदयमें तू दान करनेकी प्रेरणा भर दे।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

संग चलें हम, संग रहें हम, संग करें सब काम

२१४. मित्रो, आप लोग समान चित्तवाले होकर जागो।

२१५. सब लोग मिलकर साथ-साथ चलें। एक उद्देश्यसे परस्पर मिलें। खुले हृदय और खुले मनसे मिलकर बातें करें। सबके मन एक हों।

२१६. इनका मंत्र एक हो, मंत्रणा एक हो। मंत्रणा करनेकी सभा-समिति एक हो। मन और चित्त एक हों, समान हों।

२१७. तुम्हारी संकल्प-शक्ति समान हो। सब लोग मिलकर एक-सा संकल्प करो। तुम्हारे हृदय समान हों, एक हों। तुम्हारे मन समान हों, एक हों। एक-मन हो, एक संकल्प हो, तुम रहो, जिससे तुम्हारे सारे कार्य शोभनीय हों।

२१८. हमारा मन एक हो। लक्ष्य एक हो। मनके भीतर रहनेवाली दिव्य वाणीकी हम कभी उपेक्षा न करें।

२१९. अपनोंके साथ हमारा संज्ञान हो, एकमत हो। परायोंके साथ भी हमारा संज्ञान हो। हे अश्विनीकुमारो, तुम सबके साथ हमारा मतैक्य करा दो।

मनुजमात्रकी सेवा कर हम जगतीका कल्याण करें

२२०. हमें अपंग, अंधे, बहरे, दीनदुःखी, बीमारोंके प्रति प्रेमका व्यवहार करना चाहिए। वे हमारे भाई हैं, हमारे परिवारके सदस्य हैं। हमें उनसे प्रेम करना है, उनके प्रति सहानुभूति दिखानी है। उनकी सेवा करनी है। हम उनसे कभी घृणा न करें।

२२१. मनुष्यका कर्तव्य है कि वह मनुष्य मात्रकी सेवा, सहायता और रक्षा करे।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

२२२. हम सब मिलकर मानव समाजके दुःखोंका विनाश करें।

२२३. कोई रोगी हो तो हम उसकी चिकित्साकी व्यवस्था करें

२२४. हम जिस ग्राम-नगरमें रहते हैं, उसके सभी मानव स्वस्थ रहें। वहाँके सभी पशु-पक्षी भी स्वस्थ रहें। सभी पुष्ट रहें, सभी नीरोग रहें। सबका कल्याण हो।

२२५. विष्णु भगवान् सारी कामनाएँ पूरी करनेवाले हैं। तू सारे संसारका कल्याण करनेवाली सुमति हमें प्रदान कर।

२२६. हे देवताओ, हमारा द्वेष दूरकर हमें सुख पहुँचाओ, जिससे सारे विश्वका कल्याण हो।

२२७. हे प्रभो, हमारी सारी क्रियाएँ तुझतक ले जानेवाली हों, सबका कल्याण करनेवाली हों और अहिंसापूर्ण हों।

२२८. हे परमेश्वर, वही मनुष्य अपने हृदयमें तेरे दर्शन करता है, जो महान अहिंसक योगी होता है।

२२९. हे प्रभो, तू ऐसे ही कर्मयोगी पुरुषके हृदयमें निवास करता है, जो किसीसे द्वेष नहीं करता।

द्वेषमुक्त कर दो प्रभु हमको, कोई न हमसे वैर करे

२३०. हे देव, न तो हम किसी प्रकारकी हिंसा करें और न हम किसी प्रकारकी अव्यवस्था फैलायें।

२३१. मैं यदि किसी व्यक्तिको कष्ट दूँ, किसीको पीड़ा पहुँचाऊँ, या किसीके जीवनमें आग लगाऊँ, तो मैं आज ही मर जाऊँ!

२३२. हे प्रभु, तू हममें ऐसी भावना भर दे कि हम किसी दुष्ट मनुष्यका भी अनिष्ट-चिन्तन न करें।

२३३. मुझसे जो व्यक्ति द्वेष करता है, उसपर भी मैं किसी प्रकारका प्रहार न करूँ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

२३४. हे जगदीश्वर, जो अज्ञानवश हमारा अपमान करता है, उसे मारनेके लिए तू हमें कभी मत प्रेरित कर। हमें उस व्यक्तिपर भी क्रोध करनेके लिए तू मत प्रेरित कर, जो स्वयं हमारे सम्मुख अपने कृत्यके लिए लज्जित हो रहा हैं।

२३५. हे इन्द्र, तू हमारे आगे पीछे, ऊपर नीचे—सर्वत्र निर्वैरताका वातावरण बना दे।

२३६. हे प्रभु, हमारे मनमें द्वेषकी जो भावनाएँ हैं, उन्हें तू नष्ट कर दे। संसारसे द्वेषकी सारी भावनाएँ उठा ले।

२३७. हे प्रभु, तू हमें द्वेषपूर्ण कार्योंसे मुक्त रख।

२३८. हे प्रभु, सारे द्वेषकर्मोंसे तू हमें दूर कर दे।

२३९. अपनी शक्ति द्वारा हमारी रक्षा करनेवाले हे समर्थ परमेश्वर, तू हमारे भीतरसे द्वेषकी सारी भावनाएँ निकालकर दूर फेंक दे।

२४०. हे प्रभो, हमारे सारे राग-द्वेष आदि विकार तू दूर कर दे।

शत्रु हमारे मित्र बनें, हम सबसे निर्भर हो जावें

२४१. हे प्रभु, हम जहाँ-जहाँसे होकर जायें, सर्वत्र हमें तू निर्भय बना दे। हमारी प्रजाओंद्वारा, हमारे पशुओंद्वारा तू हमें सुख पहुँचा।

२४२. मेरे मनसे द्वेष निकल गया है। पृथ्वी और सूर्य मेरे लिए मंगलकारी बन गये हैं। सारी दिशाएँ मेरे लिए शत्रुरहित बन जायें। मेरा किसीके प्रति द्वेष नहीं है। मेरे लिए और सबके लिए अभय ही अभय है।

२४३. मानवमात्र कभी हमसे वैर न करें।

२४४. हमें मित्रसे अभय हो, अमित्रसे भी अभय हो। परिचित और ज्ञात लोगोंसे अभय हो, अपरिचित लोगोंसे भी अभय हो। हमें

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

रात्रिमें भी अभय हो और दिनमें भी अभय हो। सारी दिशाएँ हमारे लिए मित्र बन जायँ।

२४५. हे प्रभो, शत्रु भी हमारे मित्र बनकर हमारी प्रशंसा करें।

सबका हो कल्याण जगतमें, शान्ति सभी प्राणी पावें

२४६. मुझे आनन्द हो। मेरा कल्याण हो। मुझे कोई भय न रहे।

२४७. हमें शान्ति मिले, सुख मिले। कोई भी दुःख हमें पीड़ित न करे। पापोंकी क्षमा हो। हमारे सारे रोग दूर हों। सारा जगत हमारे लिए भयनाशक हो। हम किसीसे भयभीत न हों।

२४८. रुद्रदेव हमारे स्त्री-पुरुषोंको—हमारी गौओं, घोड़ों, मेढ़ों-मेढ़ियों आदिको सुख प्रदान करें। हम सबका कल्याण करें।

२४९. सविता देव हमारी रक्षा करें, कल्याण करें। प्रकाशवती ऊषा हमारे लिए सुखरूप हो। पर्जन्य देव, मेघ हमारे लिए सुखकारी हों। क्षेत्रपति सारी प्रजाको सुख दें। हमारा कल्याण करें।

२५०. हमारे लिए सब कुछ शान्तिमय हो। द्यौ, पृथ्वी, अन्तरिक्ष, उत्तम जलसे भरी नदियाँ, सभी शान्तिदायिनी हों। सारी औषधियाँ शान्तिमय हों।

२५१. पृथ्वी, अन्तरिक्ष, द्यौ, जल, ओषधियाँ, विश्वेदेवा—सभी शान्त हों। सभी हमें शान्ति प्रदान करें। सर्वत्र शान्ति ही शान्ति हो।

ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

आभार

वेदामृत आपने पान किया। प्रेम ही इसका सार है। जीवन के हर क्षेत्रमें वेदने प्रेम, अहिंसा और मैत्रीपर बल दिया है। आप यदि इस दिशामें बढ़ेंगे तो यह लेखक अपना श्रम सार्थक समझेगा।

इस शोध-कार्यमें प्रेरणा है—महात्मा गांधीकी।

विनोबा जीने मंत्रोंका चयन देखकर कहा 'ठीक है'।

आचार्य पण्डित मुंशीराम शर्माने भूमिका लिखकर मेरी पीठ ठोंकी है।

संम्पूर्णानन्द संस्कृत-विश्वविद्यालयके अन्तर्गत सरस्वती पुस्तकालयके अध्यक्ष पण्डित लक्ष्मी नारायण त्रिपाठी और उनके सहायकोंकी कृपासे कई वर्षतक पुस्तकालयके अनेक ग्रंथोंका अध्ययन कर सका।

बौलिया बाग राम कटोरा नागरिक परिषद्के अध्यक्ष श्री तिलकधारी वर्मा वर्षोंतक चारों वेदकी पोथियां मेरे पास छोड़े रहे।

इन सबके प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट करता हूं।

सहधर्मिणी श्रीमती सरस्वती देवीको किन शब्दोंमें धन्यवाद दूं,

जिन्होंने अन्य ज्यादतियोंकी भांति मेरी इस ज्यादतीको भी सहर्ष सहन किया।

श्री हरिप्रसाद निगमका भी मैं आभारी हूं, जिन्होंने इस रचनाका सुन्दर ढगसे छापकर मुझे कृतज्ञ किया है।

—श्रीकृष्ण दत्त भट्ट

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

लेखक की अन्य रचनाएँ

नीति : धर्म : सदाचार

धर्मोंकी फुलवारी (भारत सरकारसे, Unesco से पुरस्कृत); वैदिक धर्म क्या कहता है ? (तीन भाग); जैन धर्म क्या कहता है ?; बौद्ध धर्म क्या कहता है ?; पारसी धर्म क्या कहता है ?; यहूदी धर्म क्या कहता है ?; ताओ और कनफ्यूश धर्म क्या कहता है ?; ईसाई धर्म क्या कहता है ?; इसलाम धर्म क्या कहता है ?; सिख धर्म क्या क्या कहता है ?; अस्माउल हुस्ना (अल्लाहके प्यारे नाम); हम सब भाई–कहता बहाई; मोह निरसनी गेयं गीता (छ भाग); Love and Non-violence in the Veda… …।

आओ हम बनें उदार और दयालु; मीठे और मुलायम; साहसी और मेहनती; नम्र और सेवा-परायण; सच्चे और अच्छे; सुशील और सहनशील; नेक और ईमानदार; उद्योगी और पराक्रमी; सेवाकी पगडण्डी; उठो, आगे बढ़ो; मीठ-ामीठा बोल; बापूकी राम-साधना; दिल किसीका मत दुखा।

सर्वोदय : अर्थशास्त्र : समाजशास्त्र

नक्षत्रोंकी छायामें; चलो चलें मँगरौठ, चम्बलके बेहड़ोंमें—बागियोंका आत्मसमर्पण; प्यारे भूले भाइयों; बयरु न कर काहू सन कोई; मुलायम बनाओ अपना दिल।…And they gave up dacoity.

भारत वर्षका आर्थिक इतिहास (बंगाल हिन्दी मंण्डल और उत्तर प्रदेश शासनद्वारा पुरस्कृत), भारतवर्षका सांस्कृतिक इतिहास (पुरस्कृत), आर्थिक विचार-धारा: उदयसे सर्वोदयतक; सांस्कृतिक विघटन और भारत (बिहार हिन्दी ग्रंथ अकादमी)—काशी विद्यापीठ और भागलपुर विश्वविद्यालयके बी०, ए०, एम० ए० का पाठ्यग्रंथ; इन्सानियतका तकाजा; क्रान्ति–अर्थ और प्रक्रिया (गांधी शांति प्रतिष्ठान)।

वर-वधूसे दो बातें; पत्नी चाहती क्या है ?; पति चाहता क्या है ?; पति-पत्नी हों एक प्राण तन।

जीवन चरित्र : रेखाचित्र

सेवाके पुजारी; जाजू जी—जीवन और साधना; बाबा विनोबा (मराठी, पंजाबी, बंगला आदिमें अनूदित); गांधी-जीवन-सूत्र; वर्धमान महावीर; भारत छोड़ो आन्दोलनके सेनानी जयप्रकाश; सम्पूर्ण क्रान्तिके लोकनायक—जयप्रकाश………।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Love and Non-Violence In The Veda

Text, purport, gist and a round of 251 Hymns

—Shrikrishna Datta Bhatta

This Brochure V

This Brochure is a study of 251 Vedic Hymns by Shrikrishna Datta Bhatta, President Varanasi Chapter of WCRP. It gives in a nutshell the gist of the Veda. It insists on Love, Non-violence and Friendship in all the spheres of life, whether personal, domestic, economic or social.

चारों वेदों की पवित्र मंत्रराशि में से चुनी २५१ ऋचाओं का नवनीत: प्रेम, अहिंसा. मैत्री। जीवन के सभी क्षेत्रों में प्रेम।

प्रेम भाव भर दे प्रभु हम में
सब के प्यारे बन जावें।
जगती के हर प्राणी की
आँखों के तारे बन जावें॥
घट-घट में प्रभु ही रमता है
जड़ चेतन में बसा वही।
जीवन का यह तत्व समझ कर
सब के प्यारे बन जावें॥

WCRP
VARANASI (U.P.)

Love and Non-Violence in the Veda : Rupees Eight Only

वेद में प्रेम, अहिंसा, मैत्री — आठ रुपया मात्र

" " (केवल छन्दमय नवनीत) — दो रुपया मात्र

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi